

चन्दामामा
50
8



अभिमन्यु ने ज्योंही पञ्चव्यूह में प्रवेश किया तो त्योंही कौरव सेना यों ज़ोर-ज़ोर से जयजयकार करने लगी; जैसे अभिमन्यु उनके हाथ आ गया हो। परन्तु तुरन्त अभिमन्यु ने उनका जोश ठण्डा कर दिया। वह कौरव सेना पर जोर शोर से आक्रमण करने लगा। कौरव सेना उसका मुकाबला न कर सकी और भयभीत हो तितर-बितर होने लगी।

दुर्योधन ने तङ्ग आकर अभिमन्यु पर हमला किया। उसकी सहायता करने के लिए योद्धा आये। अभिमन्यु भीषण रूप से युद्ध कर रहा था। उसने एक बार ऐसा बाण छोड़ा कि वह कर्ण के शरीर में घुस गया। उसने शल्य को मूर्छित कर दिया। सुषेण, दीर्घलोचन, कुण्डभेदी योद्धाओं को मार दिया। शल्य के भाई का सिर काट दिया। अस्त्र-शस्त्रों के बारे में जितना कृष्ण और अर्जुन जानते थे, उतना ही चालक अभिमन्यु भी जानता था। वह उनकी तरह उनका उपयोग भी कर सकता था। वह यों एक एक योद्धा को मार रहा था और द्रोण यह सब देख रहा था, पर कुछ कर न पाता था।

और तो और उसने दुर्योधन से कहा भी-"देखो, यह लड़का कितनी अच्छी तरह युद्ध कर रहा है। यह पाण्डवों से किसी भी दृष्टि से कम नहीं है! इससे कौन युद्ध कर सकता है? न मालूम इसने क्यों छोड़ दिया, नहीं तो यह ही हमारी सारी सेना का नाश कर सकता है।"

द्रोण की ये बातें दुर्योधन को भालों की तरह चुभी। उसने परिहास-सा करते हुए कर्ण, दुशासन, शल्य, बाल्हीक आदि

योद्धाओं से कहा-"लगता है, इस ब्राह्मण का अर्जुन के इस लड़के को मारने का इरादा मालूम नहीं होता है। कम से कम तुम ही यह काम पूरा करो।"

तब दुश्शासन ने कहा-"भैया, मैं एक क्षण में अभिमन्यु को मारे देता हूँ। यह सुन कृष्ण और अर्जुन चिन्तित हो जायेंगे। पाण्डव आत्महत्या कर लेंगे। तुम्हारे लिए शत्रु नाश हो जायेगा।" वह यह कहता अभिमन्यु की ओर लपका। अभिमन्यु ने एक बाण कानों तक खींचा और दुश्शासन की छाती पर छोड़ा। दुश्शासन को वह लगा और वह वहीं मूर्छित हो गया। उसका सारथी रथ हाँक कर ले गया। यह देख पाण्डव सेना ने जयजयकार किया।

कर्ण को क्रोध आगया। वह बाण छोड़ता अभिमन्यु के पास गया। अभिमन्यु ने एक ही बाण से उसकी ध्वजा और हाथ के बाण को तोड़ दिया। उसे असहाय कर दिया। कर्ण की जब रक्षा करने उसका भाई आया, तो अभिमन्यु ने इस तरह बाण छोड़ा कि उसका सिर धड़ से अलग हो गया। कर्ण अपने भाई को मरा देखकर शोक कर



रहा था कि अभिमन्यु उसकी सेना को तहस नहस करने लगा। कौरव सेना घबरा गई और इधर उधर भागने लगी। अभिमन्यु के हाथ उस दिन कितने ही मारे गये।

इस तरह शत्रु का निर्मूलन करते आगे जाते अभिमन्यु के पीछे युधिष्ठिर, भीम, सात्यकी, नकुल, सहदेव, धृष्टद्युम्न, विराट, द्रुपद आदि अपनी सेनायें लेकर सामने आये। उस दिन सैन्धव ने उन सबको रोका।

इसका एक और कारण था। धृतराष्ट्र का दामाद सैन्धव कभी द्रौपदी को जबर्दस्ती



उठाकर ले जाना चाहता था। परन्तु भीम ने उसे हरा दिया। फिर उसने घोर तपस्या की। शिव ने उसको स्वप्न में दर्शन दिया और उसने उसको वर दिया कि सिवाय अर्जुन के वह युद्ध में सब पाण्डवों को रोक सकेगा। वह वर अब काम में आया। जिस तरह अभिमन्यु ने कौरव सेना का नाश किया था, वह भी पाण्डव सेना का नाश करने लगा।

अभिमन्यु अकेला कौरव सेना को निर्मूल करता, जो कोई उससे लड़ता, उसको हराता, आगे बढ़ा। वृषसेन अपने सारथी को खो बैठा, जैसे तैसे जान बचाकर वह भाग गया। वसातीय, जिसने लोहे का कवच पहन रखा था अभिमन्यु के हाथ मारा गया। कितनों ने ही बढ़कर अभिमन्यु पर आक्रमण किया, पर वे सब मारे गये। इस तरह मारे जानेवालों में शल्य का लड़का रुक्मरथ भी था।

यह देख रुक्मरथ के मित्रों ने मिलकर अभिमन्यु पर वार किया। उसने सारे लोगों का मुकाबला करने के लिए गान्धर्व अस्त्र का उपयोग किया। उनमें भ्रान्ति पैदा की। फिर उनमें से सैकड़ों को मार दिया। इस हत्याकाण्ड को देख दुर्योधन ने गुस्से में अभिमन्यु पर हमला किया। वह क्षण भर ही उससे लड़ सका। फिर वह उसका सामना नहीं कर पाया और भाग गया।

फिर क्या था द्रोण, अश्वत्थामा, बृहद्बल, कृप, कृतवर्मा, कर्ण आदि अभिमन्यु से लड़ने के लिए निकले। लक्ष्मण, अभिमन्यु से जा भिड़ा। अपने लड़के की मदद के लिए दुर्योधन तुरन्त साथ आया। दोनों का कुछ समय तक युद्ध हुआ। आखिर अभिमन्यु ने लड़ते लड़ते लक्ष्मण का सिर काट दिया।

दुर्योधन अपना शोक रोक न सका। वह जोर से चिल्लाया-"अरे, उसे मार दो।" यह सुन और योद्धा भी आये। सैन्धव के सैनिक भी आये। यद्यपि सब मिलकर उससे युद्ध कर रहे थे, तो भी अभिमन्यु ने क्राथपुत्र को मार दिया। द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, वृहद्बल, कृतवर्मा के सिवाय सब पीछे हटे। इन्होने अभिमन्यु को चारों तरफ से घेर लिया। अभिमन्यु ने इन सब पर बाण छोड़ते हुए दुर्योधन के भाइयों में से वृन्दारक को मार दिया। कोशल के राजा बृहद्बल के घोड़ों को मार दिया। उसकी ध्वजा तोड़ दी। सारथी को मार दिया। धनुष तोड़ दिया। जब वह ढाल और तलवार लेकर बढ़ा तो अभिमन्यु ने इस तरह बाण छोड़ा कि वह वृहद्बल की छाती में से निकल गया और वह मर गया। इसके बाद उसने कर्ण के छहों मन्त्रियों को मार दिया, उसने दस हज़ार क्षत्रियों को मार दिया। इस प्रकार लड़के अभिमन्यु को मारने के लिए द्रोण ने अपने अनुचरों से कहा-"इसके बाण अचूक हैं। कवच धारण करने में यह उतना ही चतुर है





जितना कि अर्जुन। जब तक उसके हाथ में बाण है हम उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते। यह किसी भी बात में अर्जुन से कम नहीं है। अगर हमने इसका धनुष तोड़ दिया, और इसको रथ से उतार दिया तभी हम इसको मार पायेंगे।"

सबने अपना अपना काम किया। कर्ण ने अभिमन्यु का धनुष तोड़ दिया। भोज ने उसके घोड़ों को मार दिया। कृप ने सारथी को मार दिया। बाकी सबने अभिमन्यु पर बाण वर्षा की।

अभिमन्यु ने ढाल और तलवार लेकर ही बहुत पराक्रम दिखाया। उस हालत में भी वे सब उससे डर रहे थे कि वह कब किस पर कूदता है। द्रोण ने उसके हाथ के तलवार को तोड़ दिया, और कर्ण ने उसकी ढाल को।

अभिमन्यु आग बबूला हो उठा। वह घायल शेर की तरह एक पहिया लेकर द्रोण की ओर बढ़ा। उसका सारा शरीर खून से लथपथ था। कौरव सैनिकों ने उस पहिये के टुकड़े टुकड़े कर दिये। जब अभिमन्यु एक गदा लेकर अश्वत्थामा की ओर बढ़ा, तो वह तीन कदम पीछे हट गया। अभिमन्यु ने अपनी गदा से उसके घोड़े और सारथी को मार दिया। शकुनि के अठत्तर सैनिकों को मार दिया। सात कैकेयों को मार दिया। दुश्शासन के लड़के के रथ पर हमला किया।

दुश्शासन का लड़का गरमा उठा। वह एक गदा लेकर अभिमन्यु से लड़ने लगा। दोनों गदा युद्ध करते करते नीचे गिर पड़े।

तबतक अभिमन्यु बहुत थक थका गया था। वह ठीक तरह हिलडुल भी न

पाता था। दुश्शासन का लड़का पहले उठा। अभिमन्यु अभी उठ रहा था कि उसने अपनी गदा अभिमन्यु पर मारी। अभिमन्यु गिर पड़ा। और वह फिर न उठ पाया।

यह जान कि अभिमन्यु मारा गया है कौरव सेना के आनन्द की सीमा न रही। उन्होंने जयजयकार किया। पाण्डव सेना भागने लगी। छः महायोद्धाओं ने मिलकर एक असहाय लड़के को मार दिया और वह लड़का इस बहादुरी से लड़ा कि उसने बहुत से शत्रुओं को मार दिया।

पाण्डव योद्धा अपने अस्त्रों को फेंककर युधिष्ठिर के चारों ओर खड़े हो गये।

"हाय, मैं भी कितना पापी हूँ। मैंने ही अभिमन्यु को पद्मव्यूह में मरने के लिए भेजा था। अब अर्जुन को कैसे मुँह दिखाऊँगा? कृष्ण से क्या कहूँगा? अब मुझे विजय की क्या आवश्यकता है? राज्य की क्या जरूरत है?" युधिष्ठिर शोक करने लगा। तब व्यास महामुनि ने वहाँ आकर कहा-"युधिष्ठिर, शोक मत करो। अभिमन्यु से भी बड़े बड़े



महायोद्धा युद्ध भूमि में मारे जा चुके हैं। सृष्टि में सभी प्राणियों की मृत्यु अपरिहार्य है।" युधिष्ठिर की मनःशान्ति के लिए कुछ कहानियाँ सुनाकर वह चला गया।

इतने में सूर्यास्त हो गया। सेनायें अपने शिविरों में चली गई। अर्जुन, संशप्तकों का सर्वनाश करके कृष्ण के साथ शिविर वापिस आ रहा था कि उसे कुछ अपशकुन दिखाई दिये। उसने सोचा कि युधिष्ठिर पर कोई आपत्ति आई थी। वह शिविर के पास था कि उसकी चिन्ता और बढ़ गई। शिविर में कोई शोर शरावा

न था। न शंख ध्वनि थी, न सङ्गीत ही। सब सुनसान सा था। जो कोई अर्जुन के सामने आता, वह सिर नीचा करके अलग हो जाता।

कृष्ण और अर्जुन ने शिविर में प्रवेश किया। जब वे उस जगह गये, जहाँ पाण्डव चिन्तित बैठे थे, उसे अभिमन्यु के वध का वृत्तान्त मालम हुआ। अर्जुन के दुःख की सीमा न रही। उसे लगा कि अपने लड़के को देखने के लिए स्वयं उसका मरना ही अच्छा था। फिर उसके दुःख में क्रोध भी आ मिला। "तुम सबके होते हुए मेरा लड़का कैसे मारा गया? क्या तुम्हारे शस्त्र, कवच, आभूषण मात्र ही हैं?"

तब युधिष्ठिर ने बताया कि कैसे सैन्धव ने उन सब को रोक रखा था। यह सुन अर्जुन पगला-सा गया। हाथ मलते हुए वह चिल्लाया- "योद्धाओ। मैं कल सैन्धव को मार दूँगा। वह कौरवों को छोड़े न, न हमारी, युधिष्ठिर की, या कृष्ण की शरण ही माँगे। यदि किसी ने उसको बचाने की कोशिश की तो वह मेरे हाथ मारा जायेगा। वह मेरी मैत्री तो भूल ही बैठा, और दुर्योधन के साथ जा मिला, और अब मेरे लड़के की हत्या का कारण भी बना! अगर कल शाम तक मैं उसे न मार पाया, तो शाम को चिता जलाकर मैं उसमें प्रवेश करूँगा। यही मेरी प्रतिज्ञा है। अगर मैं यह पूरी न कर सका तो मेरी ही वही गति हो, जो मातृ हन्तक और पितृ हन्तकों की होती है।"

तुरन्त कृष्ण ने पाँचजन्य बजाया और अर्जुन ने देवदत्त पाण्डवों ने सिंहनाद किया। और उस सुनसान पाण्डव शिविर में विजयोल्लास-सा होने लगा।





[७]

[अमरपाल ने जो उग्राक्ष के हाथ आ गया था, चित्रसेन को अग्निद्वीप वासियों के बारे में बहुत से भेद बता दिये थे। चित्रसेन को राजद्रोही नागवर्मा के बारे में भी बहुत-सी बातें मालूम हुई। अमरपाल ने कहा कि वह उन शेर के चमड़े पहननेवाले लोगों को और उनके भयङ्कर पक्षियों के पिञ्झड़ों को जलाकर उनका सर्वनाश कर देगा। बाद में-]

अमरपाल की बात सुनकर चित्रसेन ने उग्राक्ष की ओर देखा। उग्राक्ष ने अमरपाल की बातों पर विश्वास किया। वह जोश में उठा। "मैं अपने सेवकों में से दो राक्षसों को साथ भेजूँगा। अगर यह काम सफलतापूर्वक हो गया, तो अमरपाल को खूब ईनाम दूँगा।"

चित्रसेन ने एक दो क्षण सोचकर कहा-"लगे हाथ उस कपिलपुर पर आक्रमण करना भी ठीक होगा। वह नागवर्मा, जिसने राजा को कैद में डाल रखा है, धवलगिरि पर हमला करने गया है। अब कपिलपुर की रक्षा के लिए बड़ी-सी सेना शायद न होगी। इसलिए अगर हमने यकायक कपिलपुर पर हमला किया, तो वहाँ के किले को हम वश में कर सकते हैं।"

चित्रसेन का यह कहना था कि उग्राक्ष सहसा उछला। उसने कहा- "बड़ा



उसकी लड़की से विवाह करना चाहता था। फिर यह भी सम्भव है कि उस कान्तिमति ने अब कोई और वर भी चुन लिया हो। यह राक्षस उग्राक्ष मनुष्यों की मान-मर्यादा क्या जाने!

"उग्राक्ष! अब हमारा प्रयत्न नागवर्मा को पराजित करना होगा। इस प्रकार एक ऐसे आदमी का खातमा हो जायेगा, जो हमारे बगल में छुरी की तरह है। वीरसिंह को ही कपिलपुर का राजा बनायेंगे। पर इन सब के होने से पहले हमें उन भयङ्कर पक्षियों को और उनके सवारों को मारना होगा। जब तक वे उस राज्य में हैं, चाहे हम कितनी बड़ी सेना ले जायें, हम उनका कुछ न बिगाड़ सकेंगे। यह भी सम्भव है कि हम ही उनके हाथ पकड़े जायें।" चित्रसेन ने कहा।

यह जिम्मेवारी मुझ पर छोड़िये। आप सेना लेकर जङ्गल में छुपे रहिये। जब भयङ्कर पक्षी पिञ्झड़ों में तड़प-तड़पकर मर जाये तब आप कपिलपुर पर आक्रमण कर सकते हैं।" अमरपाल ने कहा। इसके लिए चित्रसेन और उग्राक्ष मान गये। तुरन्त अमरपाल के साथ दो

अच्छा ख़याल है चित्रसेन। हम कपिलपुर पर तो आक्रमण करेंगे ही। वीरसिंह महाराजा की लड़की, कान्तिमति को भी नागवर्मा के चुङ्गल से छुड़ायेंगे। तुम युवक हो, कारे हो। एक पन्थ दो काज। दोनों काम निबट जायेंगे। तुम्हारा राज्य तो दुगना होगा ही, एक सुन्दर राजकुमारी तुम्हारी पत्नी भी बन सकेगी।"

उग्राक्ष की बातें चित्रसेन को पसन्द न आई। कपिलपुर का राजा जब जीवित था, उसके राज्य को अपने राज्य में मिलाना, उसे न भाया। न वह पिता की अनुमति के बगैर

राक्षस और चार चित्रसेन के सैनिक निकल पड़े।

देखते-देखते अमरपाल उनको साथ लेकर पेड़ों के पीछे ओझल हो गया। चित्रसेन और उग्राक्ष ने अपने सैनिकों को सन्नद्ध रहने के लिए सेवकों द्वारा आज्ञा भेजी।

इस बीच अमरपाल सैनिकों को लेकर, जङ्गल की पगडण्डियों से होता होता, दुपहर तक कपिलपुर के जङ्गल के पास पहुँचा। उस जङ्गल में करीब-करीब सौ भयङ्कर पक्षी बड़े-बड़े पिञ्जड़ों में बँधे थे। उनकी रखवाली करनेवाले पास छोटे-छोटे घरों में रहते थे।

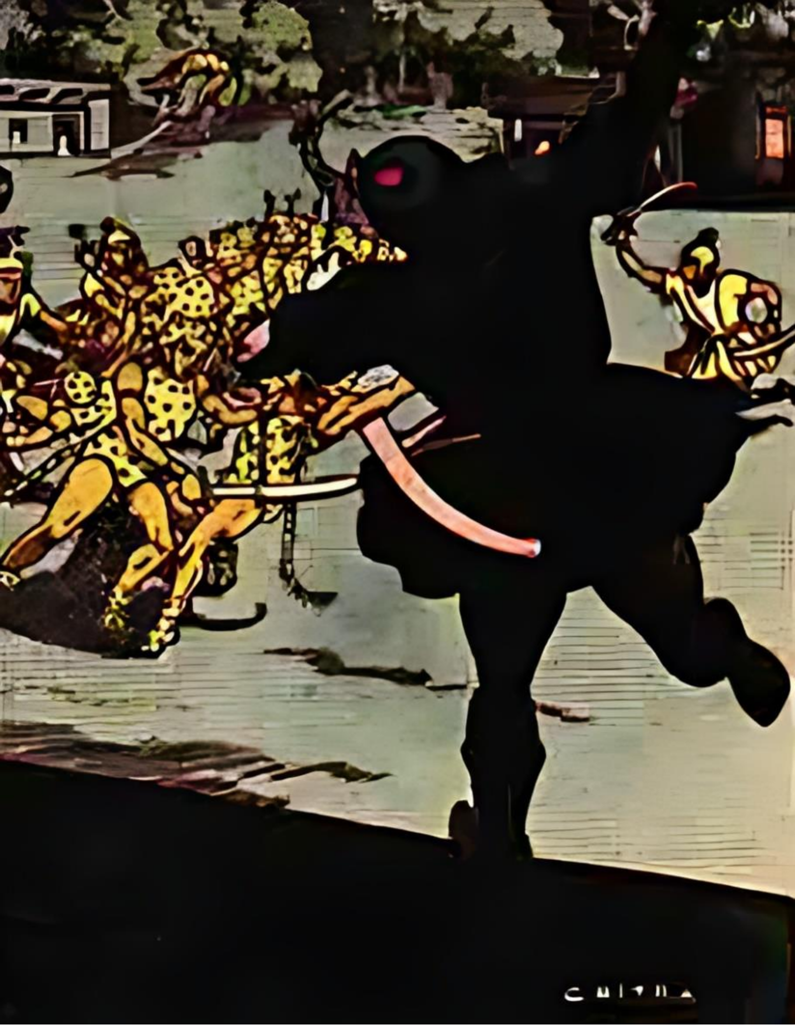
अमरपाल ने अपने साथियों को एक जगह इकट्ठा करके रखवाली करनेवालों के घर दिखाते हुए कहा-"मैं इस इलाके को अच्छी तरह जानता हूँ। उन चौकीदारों में से भी मैं हरेक को जानता हूँ। मैं उसके पास जाकर उनको एक जगह जमा करूँगा। उस समय तुम तुरन्त उनपर हमला करना और उनका काम तमाम कर देना। उसके बाद भयङ्कर पक्षियों के पिञ्जड़ों को जला देना।"



सब इसके लिए मान गये। फिर अमरपाल चौकीदारों के घरों की ओर चिल्लाता, हल्ला करता भागा। उसका चिल्लाना सुन चौकीदार भागे-भागे आये। उन्होंने अमरपाल को घेर लिया। वे सब मिल मिलाकर बीस भी न थे।

"अमरपाल! जीते जी, तुम बाहर आ गये! हमने सोचा था कि तुम उन राक्षसों के हाथ पड़कर मर मरा गये थे।" उन्होंने कहा।

"मर जाता, पर अभी इस भूमि पर रहना था। इसलिए जीते जी यहाँ तक



आ सका। कैसे-कैसे, कितनी चालें चलकर मैं उसके चुङ्गल से निकल सका, ये तो भगवान ही जानते हैं। पक्षी सब ठीक हैं न, कोई मर मरा तो नहीं गया है! वे सब अपने पिञ्झड़ों में हैं?" अमरपाल ने पूछा।

"सब ठीक है। नागवर्मा महाराजा धवलागिरि पर आक्रमण करने गया है। हम ही कपिलपुर के रक्षक हैं। किले में कुछ ही सैनिक हैं। वे भी किले की रक्षा करने के लिए नही हैं, बल्कि इसलिए हैं कि राजकुमारी कान्तिमति कहीं भाग न जाये। नागवर्मा सारी सेना को साथ लेकर पहिले धवलगिरि पर फिर जङ्गल में चित्रसेन के किले पर आक्रमण करके वापस यहाँ आयेगा। उसके बाद इसमें से हर कोई एक सामन्त बना दिया जायेगा।" उन्होंने कहा।

यह सुनकर अमरपाल इस प्रकार हँसा, जैसे उसको बहुत खुशी हुई हो। उछलते हुए उसने हाथों से इशारा किया। तुरन्त पेड़ों के पीछे से राक्षस और सैनिक भागकर आये। उन्होंने चौकीदारों पर हमला किया। उसी समय अमरपाल भी तलवार लेकर अग्निद्वीप के चौकीदारों को मारने लगा। क्योंकि वे निहत्थे थे इसलिए वे मिनटों में मारे गये।

फिर अमरपाल और राक्षस घरों में घुसे। मशालें जलाकर, उन्होंने ताड़ के पत्तों से बने झोपड़े से पिञ्झड़ों को चारों ओर से आग लगा दी। उन्हीं में पक्षी बँधे थे।

हवा थी, पिञ्झड़े धाय धाय करके जलने लगे। पक्षी बड़ी-बड़ी लोहे की जञ्जीरों से बँधे थे। भयङ्कर पक्षी आग में से निकलने के लिए ज़ोर-ज़ोर से चीखे। अपनी चोञ्चों से उन्होंने जञ्जीरें तोड़नी चाहीं।





भगदौड़ मची, पर इस बीच जलती छतें ढह सी गई और जिन पक्षियों ने जञ्जीरें तोड़ ली थीं वे जलते जलते ऊपर उड़े, और छटपटाकर थोड़ी देर बाद फिर गिर गये और वहीं मर गये।

अमरपाल और उसके साथी फूले न समाये। वे खुशी में उछलने कूदने लगे। गाने गाने लगे। इतने में पहाड़ी इलाके से उनको भेरियों की ध्वनि सुनाई दी। वह ध्वनि सुनते ही अमरपाल ने उस ओर देखकर कहा-"चित्रसेन महाराजा और उग्राक्ष सेना के साथ आ रहे हैं। यहाँ हमने जो आग जलाई थीं, वह उनको दीख गई होगी। अब बस कपिलपुर पर आक्रमण करना बाकी रह गया है। तुम में से एक दो जाओ और सेनापति को कह दो कि यहाँ काम सफलतापूर्वक हो गया है। क्यों समझे?"

अमरपाल के यह कहते ही दोनों राक्षस पत्थर की गदाओं को घुमाते हुए, झाड़ियों को फाँद फाँदकर उस तरफ़ गये, जिस तरफ से ध्वनि आ रही थी।

थोड़ी देर बाद चित्रसेन और उग्राक्ष सेना लेकर वहाँ आये। उन्होंने वह भयङ्कर दृश्य देखा। अभी वहाँ लपटें उठ रही थीं। आकाश में धुआँ उड़ता देख, उग्राक्ष खुशी खुशी अमरपाल के पास आया। उसे हाथ में पकड़कर आकाश में घुमा दिया। "अरे वाह, कोई वीर हो, तो तुम सा हो। अमरपाल, तुमने जङ्गलों में शत्रुओं को खतम कर दिया, बताओ क्या चाहते हो?" उग्राक्ष ने पूछा।

"इससे पहले कि इस खुशी में तेरी छाती फट जाये मुझे छोड़ दो।"

उग्राक्ष ने उसको जमीन पर खड़ा करके उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा-

"कोई भयङ्कर पक्षी कहीं भाग तो नहीं गया है? सब यहीं आग में जल जला गये हैं न?"

"हाँ, एक भी नहीं बाहर जा सका। पर उनके सवारों में से कुछ बच गये हैं। यहाँ करीब बीस आदमी मारे गये हैं। बाकी कपिलपुर के किले में होंगे, यह मेरा अनुमान है।" अमरपाल ने उग्राक्ष की ओर देखते हुए कहा।

"अब वे कहाँ जायेंगे। किला घेरकर हम उन्हें राख में मिला देंगे।" उग्राक्ष गदा घुमाता हुआ गरजा।

"अगर ऐसा किया गया तो मुमकिन है कि राजकुमारी कान्तिमति भी खतरे में पड़े। उस किले को वश में करने की जिम्मेवारी मुझ पर छोड़ दो, उग्राक्ष।" चित्रसेन ने कहा।

"हाँ हाँ, मैं उस लड़की की बात ही भूल गया था। किले को देखो कोई नुक्सान न पहुँचाना, समझे!" उग्राक्ष ने अपने सेवकों की ओर बड़ी आँखें करते हुए कहा।

"समझ गये हैं, समझ गये हैं, सरदार!" उन सबने एक साथ जोर से कहा।



उसके बाद, चित्रसेन ने अमरपाल के साथ दस घुड़सवार कपिलपुर की ओर भेजे, ताकि मालूम किया जा सके कि वहाँ क्या हो रहा था। बाकी सैनिक खाना पकाने में लग गये।

सूर्य पश्चिम में छुप रहा था, सैनिक भोजन समाप्त करके पेड़ों की छाया में आराम कर रहे थे। एक घुड़सवार ने बड़ी तेजी से वहाँ आकर कहा-"महाराज! खतरा। पचास साठ शेर का चमड़ा पहने लोग राजकुमारी को पालकी में बिठाकर किला छोड़ जङ्गल में जाने कहाँ जल्दी जल्दी भागे जा रहे हैं।"

यह सुनते ही उग्राक्ष और चित्रसेन चौंके। कपिलपुर के किले में शेर का चमड़ा पहननेवाले इन लोगों को मालूम हो गया होगा कि यहाँ भयङ्कर पक्षी मर गये हैं। यहाँ जो धुँआ उड़ा उससे उन्होंने अनुमान कर लिया होगा। इसलिए उन्होंने सोचा होगा कि किले में उनकी रक्षा न हो सकेगी। यही कारण होगा कि वे राजकुमारी कान्तिमति को कहीं पहाड़ों में छुपाने के लिए ले जा रहे हैं।

चित्रसेन ने यह अनुमान करके अपने सैनिकों में से पचास हट्टे-कट्टे अच्छे सैनिक चुने। उग्राक्ष भी अपने चुने हुए आदमियों को लेकर राजकुमारी की रक्षा करने के लिए पगडण्डी से गया। बाकी सेना को आज्ञा दी गई कि अमरपाल के नेतृत्व में वे कपिलपुर के किले को आधीन करें।

गुप्तचर घुड़सवार रास्ता दिखा रहा था। चित्रसेन थोड़ी देर में उस जगह पहुँचा, जहाँ शेर का चमड़ा पहने हुए लोग थे, जैसा कि दूत ने बताया था। एक पालकी को चार कहार ढोकर ले जा रहे थे। उसके आगे पीछे तलवारें और कटारें लेकर शेर का चमड़ा पहने लोग चल रहे थे।

यह देख कि चित्रसेन उनके पास आ रहा था उन लोगों का सरदार तलवार हाथ में लेकर जोर से चिल्लाया-"पालकी नीचे रखो।" कहारों को यह आज्ञा देकर, उसने अपने सैनिकों से कहा-"जब तक हमारे शरीरों में प्राण हैं तब तक हम कान्तिमति को शत्रुओं के हाथ नहीं पड़ने देंगे, और हम में जो अन्त में मरेगा, उसको कान्तिमति को भी मारना होगा। यह महाराजा नागवर्मा की आज्ञा है।"

(अभी है)





विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया, चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा, तुम बहुत हठी मालूम होते हो। कभी अग्निमित्र ने अपना हठ छोड़ कुन्ती से विवाह किया था, पर तुम अपना हठ छोड़ते नहीं मालूम होते। तुम्हें थकान न मालूम हो, इसलिए उन दोनों की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी शुरू की।

किसी जमाने में कपित्थ देश की राजधानी कपित्थ नगर में, कालीवर्मा नाम का एक बूढ़ा क्षत्रिय रहा करता था। वह कभी राजा के यहाँ नौकर था। कई युद्धों में बहादुरी दिखाकर उसने काफी कीर्ति कमाई थी। अब उसकी उम्र अस्सी वर्ष की थी। कपित्थ नगर एक पहाड़ पर था। उसके दक्षिण में कालीबर्मा का एक छोटा-सा किला था। उसके दक्षिण में बड़ा खड



था। कालीवर्मा का कुटुम्ब न था। उतने बड़े घर में, वह और उसकी पोती कुन्ती ही रहा करते थे। परन्तु उसके अपने सैनिक थे, और भी बहुत से सेवक थे। वे सब उसी घर में रहा करते थे।

कुन्ती ने जब से होश सम्भाली थी, तब से वह बाबा के यहाँ थी। छुटपन में ही उसके माँ-बाप मर गये थे। यद्यपि वह बाबा के यहाँ पल रही थी, पर वह बाबा से हिली हुई न थी। इसलिए वह ऐसा अनुभव करती, जैसे जेल में हो। न उसका कोई शौक पूरा हुआ था न खेल खिलवाड़ ही कर पाती। अगर कभी वह दुःखी होती तो उसको आश्वासन देनेवाला कोई न था। अगर सुखी होती, तो उसके सुख में हिस्सा बँटाने वाला कोई न था।

एक उत्सव पर कुन्ती मन्दिर गई। वह देवी के दर्शन करके बाहर आ रही थी कि एक क्षत्रिय युवक ने उसके पास आकर कहा-"मुझे तुमसे कुछ बात करनी है। आज रात को अपनी ड्योढ़ी के किवाड़ जरा खुलवाकर रखना।"

कुन्ती उसे न जानती थी। वह उससे क्यों बात करना चाहता था, यह भी न जानती थी। उसमें किसी ने कभी कोई दिलचस्पी न दिखाई थी। क्योंकि वह पहला युवक था जिसने उसमें दिलचस्पी दिखाई थी इसलिए उसमें उसके प्रति सहानुभूति जगी। यही कारण था कि वह इस युवक के बारे में अपने बाबा को कुछ न बताना चाहती थी।

परन्तु कालीवर्मा को यह बात मालूम हो गई। कुन्ती मन्दिर के लिए ज्योंही निकली, उसने उसके पीछे अपने तीन आदमी भेजे। उनमें से एक कुन्ती के आने से पहले ही आ गया था। उसने

कालीवर्मा को बताया कि मन्दिर के सामने कुन्ती ने किसी युवक से बातचीत की थी। कुन्ती ज्योंही घर पहुँची तो कालीवर्मा ने उससे मामूली प्रश्न किये-"क्या कोई परिचित दिखाई दिया था?"



"कोई नहीं दिखाई दिया। देवी का दर्शन करके सीधे घर चली आई थी।" कुन्ती ने कहा।

"तब मन्दिर के बाहर तुमसे किसने बात की थी?" कालीवर्मा ने पूछा।

कुन्ती का मुँह पीला पड़ गया। उसके हाव भाव देखकर कालीवर्मा जान गया कि वह दोषी थी। उसने अपनी पोती से यों कहा-"जब से तुमने होश सम्भाला है, तब से मेरे यहाँ पल रही हो, पर तुम यह जानती नहीं लगती कि हमारा वंश कैसा है। हम कितने स्वाभिमानी हैं। बिना मेरी अनुमति के किसी से प्रेम करना पहली गलती है। दोनों के आपस में बातचीत करने के बाद, यदि तुम दोनों का विवाह न हुआ तो वह दूसरी गलती होगी। अगर वह तुम्हारे योग्य हो, तो किसी को कोई आपत्ति नहीं है। अगर वह योग्य न होगा, तो जीवन भर तुम ही इसका फल भोगोगी। न मैं कुछ तुम्हारी मदद कर पाऊँगा, न कोई और ही। बताओ वह कौन है? उसका नाम क्या है? उसका घर कहाँ है?"

यह प्रश्न सुन कुन्ती घबरा उठी। उसने कहा कि उस आदमी के बारे में वह कुछ भी न जानती थी।

"देखा! तुम इसलिए झूठ बोल रही हो कि उससे शादी करनी पड़ेगी। मैं तुम्हारा उससे विवाह करके रहूँगा। अगर तुमने न भी किया, तो मैं नहीं सुनूँगा।



उसने तुमसे क्या कहा था?" कालीवर्मा ने कुन्ती से पूछा।

"उसने कहा था कि वह मुझसे कुछ बातचीत करना चाहता है। उसने रात को ड्योढ़ी का किवाड़ खुला रखने के लिए कहा था।" कुन्ती ने बिना कुछ छुपाये बता दिया।

"अच्छा, बाकी काम में कर दूँगा।" कालीवर्मा ने कहा।

उसका उससे विवाह किया जाना उसको दण्ड देने के लिए था, यह कुन्ती न जान सकी। जिसने उसमें उतनी दिलचस्पी दिखाई थी वह उससे विवाह करने के लिए तैयार थी। यों विवाह करने से वह उस कैद से तो निकल सकती थी। उस दिन रात को जब रोशनी की जा रही थी, कुन्ती को दुल्हन बनाया गया। एक पुरोहित को बुलाकर विवाह के लिए सब कुछ तैयार कर दिया गया।

* * *

कुछ दिन पहले कपित्थ नगर में अग्निमित्र नामक एक क्षत्रिय नवयुवक राजा के यहाँ नौकरी करने आया। वह एक परिचित व्यक्ति के यहाँ रह रहा था। वह रोज नगर देखने निकल जाता और अन्धेरा होने के बाद घर वापस आता। तब गलियों में घूमना फिरना खतरनाक था क्योंकि शहर में अराजकता थी। अगर किसी को हथियार लिये देखा जाता तो सैनिक उसपर हमला करते। वे गलियों में गश्त कर रहे थे।

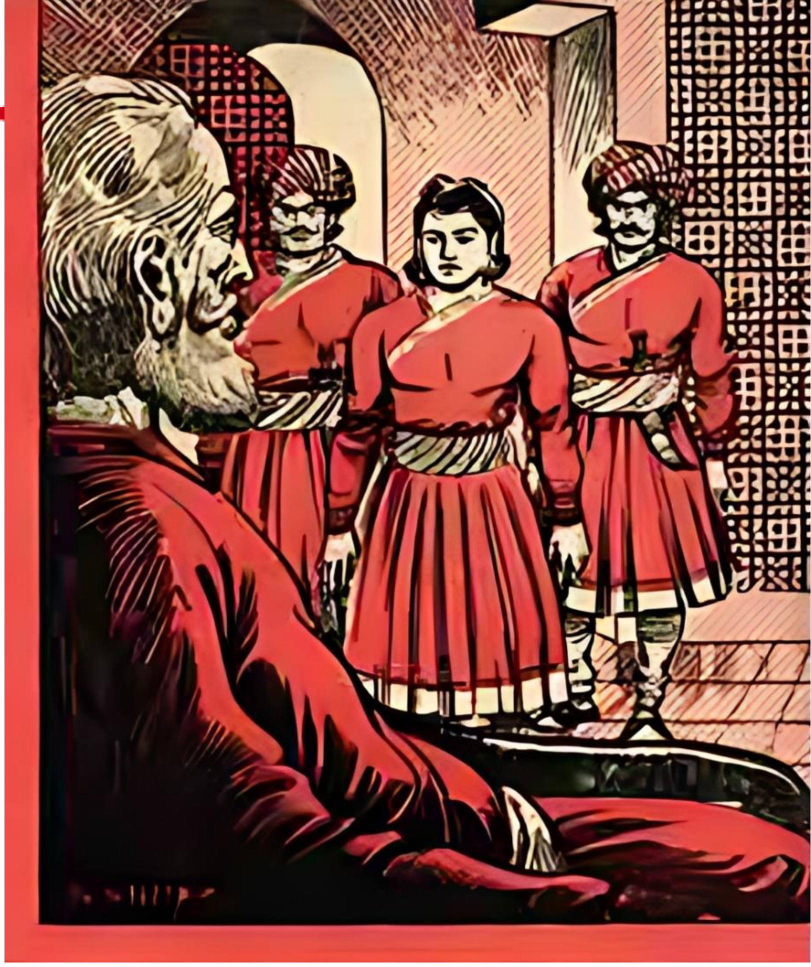
एक दिन अमिमित्र इस बात को भूल गया। नगर के आसपास के पहाड़ों में घूम फिरकर, अन्धेरा होने के बाद नगर में घुसा। अमावस की रात थी। तिस पर बादल छाये हुए थे। हाथ को हाथ न दीखता था। उस अन्धेरे में वह रास्ता

भटक गया। गलियों में घूमा फिरा, परन्तु वह उस जगह न पहुँच सका, जहाँ वह रह रहा था।

कुछ भी हो, वह नगर के दक्षिण प्रान्त में पहुँचा। जब वह एक बड़ी कोठी के पास गया, तो उसने देखा कि सैनिक हँसते, गाते, मशाल लिये उसकी ओर चले आ रहे थे। उसे लगा कि वे सैनिक पी-पाकर नशे में थे।

क्योंकि उसके पास हथियार थे इसलिए उसने उनकी नज़रों में न पड़ना चाहा। अग्निमित्र उस कोठी की ड्योढ़ी के किवाड़ की आड़ में खड़ा हो गया और ज्योंही उसका भार उस किवाड़ पर पड़ा त्योही वह खुल गया। यह अच्छा मौका जान, वह तुरन्त अन्दर चला गया। जब उसने दरवाजा बन्द करना चाहा तो किसी ने उसको घेर लिया। उसे पकड़कर उपरली मञ्जिल पर ले गये।

ऊपर एक बड़े कमरे में एक बूढ़ा बैठा हुआ था। जिन्होंने अग्निमित्र को पकड़ा था, वे उसको उसके पास छोड़कर चले गये।



"बैठो, मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहा था। मैंने कभी न सोचा था कि तुम इतने सुन्दर होगे और तुम में इतने क्षत्रिय लक्षण होंगे।" उसने कहा। वही कालीवर्मा था।

आप गलती कर रहे हैं। मैंने आपको कभी नहीं देखा है। आप शायद मुझे कोई और समझ रहे हैं। मेरा नाम अग्निमित्र है।" उसने अपने बारे में और जानकारी दी।

कालीवर्मा ने हँसकर कहा-"तुमने मुझे तो नहीं देखा है, पर मेरी पोती को अच्छी तरह जानते हो। मैं नहीं जानता कि तुम उससे शादी करना चाहते हो कि



नहीं, पर मैं तुम दोनों की अवश्य शादी कर देना चाहता हूँ पुरोहित भी तैयार है।" उसने कहा। उसने नौकरों को आज्ञा दी कि वे कुन्ती को लायें। कुन्ती दुल्हन बनकर आई। उसके मुँह की मुस्कुराहट अग्निमित्र को देखते ही काफूर हो गई। "वह आदमी यह नहीं है।" उसने कहा।

"बहुत झूठ बोलती हैं। मैं तुम्हारे झूठों की परवाह नहीं करूँगा।" कहते हुए कालीवर्मा ने पोती की ओर बड़ी आँखें की।

"मैंने इस व्यक्ति को कभी नहीं देखा है। इन्होंने कभी मुझसे बातचीत नहीं की है।" कुन्ती ने हैरान होकर कहा।

"कोई भी हो, इससे मुझे क्या? तुम्हारी शादी करने का भार मैं इस तरह उतार लूँगा। इसके लिए तुम ही जिम्मेवार हो। इसलिए चाहे तुम कुछ भी कहो, मैं नहीं सुनूँगा। मुहूर्त प्रातः काल तक नहीं आता। इस बीच, तुम दोनों आपस में बातचीत करके शादी के लिए तैयार हो जाओ। देखो, अग्निमित्र अगर तुमने भागने की कोशिश की, तो तुम्हारी खैर नहीं है। अगर इस दक्षिणवाली खिड़की से कूदे तो नीचे साठ गज का बड़ा खड्ड है। अगर इस दरवाजे से गये, तो सौ तलबारें तुम्हारे रक्त से प्यास बुझायेंगी।" यह कहकर कालीवर्मा वहाँ से चला गया।

इसके बाद अग्निमित्र ने कुन्ती की ओर मुड़कर कहा-"मुझे तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है। आखिर असली बात क्या है, ज़रा मुझे बताओ तो।"

कुन्ती ने बिना कुछ छुपाये सब कुछ बता दिया। फिर उसने कहा-"तुम्हारी बहुत शोचनीय स्थिति मालूम होती है।

जो एक से शादी करना चाहती हो और उसकी दूसरे से शादी हो जाती हो, तो इससे निर्मम बात दूसरी नहीं हो सकती। तुम्हारी कहीं ऐसी स्थिति न हो, इसके लिए मैं अपने प्राण तक देने को तैयार हूँ।" कुन्ती को बड़ा दुःख हुआ।

"आप मेरे लिए अपने प्राण न खोइये। अगर आपको मुझसे शादी करने में आपत्ति न हो, तो शादी कर लीजिये।" उसने कहा।

"आपत्ति, अगर जबर्दस्ती यह शादी की गई तो मैं बाहर कूद जाऊँगा। मैंने तुम जैसी सुन्दर स्त्री स्वप्न में भी नहीं देखी है। तुम बहुत अच्छे हृदय की भी मालूम होती हो।" अग्निमित्र ने कहा।

"तो शादी के लिए मान जाइये। अगर आप मर गये, तो मैं जिन्दगी भर रोती रहूँगी।" कुन्ती ने कहा।

"यह कभी नहीं हो सकता। मुझे तुम क्या समझ रही हो? मैं बड़ा योद्धा हूँ। क्या मैं मरने से डरता हूँ? तुम्हें मुझपर दया आ रही है कि मैं कहीं मर न जाऊँ, इसलिए ही तुम मुझसे शादी करने के लिए राजी हो



गई हो। जब तक मैं मर नहीं जाता, तब तक उस व्यक्ति से विवाह न कर पाओगे, जिससे तुम सचमुच प्रेम करती हो। इस लिए मैंने मरने का निश्चय किया है।" अग्निमित्र ने कहा।

"अगर यही बात है, तो मैं सच कह रही हूँ। सुनिये। मैंने किसी व्यक्ति से प्रेम नहीं किया है। मैं दिल से आपको ही प्रेम करती हूँ। अगर हमारी शादी न हुई, तो मैं किसी से शादी नहीं करूँगी।"

मुहूर्त से पहले कालीवर्मा ने आकर पूछा-"क्या शादी के लिए दोनों मान गये हो?"

"मैं तैयार हूँ।" अग्निमित्र ने कहा। कुन्ती ने भी स्वीकृति की सूचना देते हुए सिर नीचा किया।

उन दोनों का विवाह हो गया, अग्निमित्र को राजा के यहाँ बड़ी नौकरी भी मिल गई। बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा-"राजा, जो पहले शादी के लिए न माना था, वह आखिर कुन्ती से शादी करने के लिए क्यों मान गया? कालीवर्मा के भय से क्या? उन दोनों में किसने एक दूसरे को धोखा दिया था? अगर तुमने जान- बूझकर इनका उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर टूट जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"कुन्ती कालीवर्मा से न डरती थी। न अग्निमित्र से ही। अग्निमित्र सचमुच क्षत्रिय योद्धा था। वह जबर्दस्ती शादी करने की अपेक्षा मर जाना ठीक समझता था। कुन्ती को डर न था कि कभी उसका बाबा उसको मार सकेगा। उन दोनों ने खूब सोच समझकर ही शादी की थी। अग्निमित्र ने यह निश्चय किया कि जबर्दस्ती किसी से शादी कर लेने की अपेक्षा मर जाना अच्छा था, तभी से वह उसको सचमुच प्रेम करने लगी थी। वह उस लड़के को ही चाहने लगी थी, जो उससे बात करना चाहता था, फिर उस व्यक्ति से प्रेम करने में क्या आश्चर्य है, जो उसपर अपनी जान तक देने को तैयार था, जब कुन्ती उससे प्रेम करने लगी, तो अग्निमित्र भी जान गया कि वह सचमुच उससे प्रेम कर रही थी। इसलिए सवेरे जो उनका विवाह हुआ, वह जबर्दस्ती नहीं किया गया था।" राजा ने कहा।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





बारहवीं सदी में, तातारों ने उत्तर चीन को लूटा, बरबाद किया। परिणाम यह हुआ कि वहाँ अकाल पड़ा। परन्तु उन दिनों, दक्षिण चीन, विशेषकर उसका पूर्वी प्रान्त बहुत समृद्ध था। उस प्रान्त के पूचो नगर में, फेन्ग चुगिय को तहसीलदार नियुक्त किया गया। वह क्योंकि उत्तर चीन का था, इसलिए उसने सोचा कि पूचो नगर में वह आराम से रह सकेगा। वह तुरन्त उस शहर के लिए रवाना हुआ। वह चियेन्चो तक पहुँच भी गया।

तब तक ईशान्य चीन में भी अकाल पहुँच चुका था। चियेन्चो में तो बहुत ही जबर्दस्त दुर्भिक्ष था। क्योंकि उन दोनों युद्ध भी चल रहा था, इसलिए सरकार ने बहुत से कर वगैरह भी लगा रखे थे। लोग ये सब कठिनाइयाँ न झेल सके। वे आसपास के पहाड़ों में चले गये और वहाँ विद्रोही बन गये। फान जुवे उनका सरदार था। फान बड़ा साहसी था। उसने अभागी जनता की मदद करनी चाही। इसलिए सब उसके अनुयायी हो गये। जल्दी ही इन विद्रोहियों की संख्या लाखों हो गई। वे रात में धनियों के घरों पर हमला करते, उनको मारते और लूटते, फिर उनको जला देते। अगर कुछ मिलता, तो आपस में बराबर बाँट लेते।

सरकारी सेना को विद्रोहियों ने कई बार हराया। आखिर फान ने चियेन्चो पर कब्जा कर लिया। वह अपने को सरदार फान भी कहने लगा। पास के इलाकों को बढ़ने के लिए उसने अपने आदमी भी भेजे। अपने वंश के लोगों को अपनी सेना में बड़े बड़े पद दिये।



फान वंश में, फान शिचौ नाम का एक युवक था। उसकी आयु तेईस वर्ष की थी। वह तैरने में बहुत होशियार था। चार-पाँच दिन लगातार पानी में रह सकता था। इसलिए लोगों ने उसका नाम "पानी का साँप" रख रखा था। क्योंकि यह घोषित किया गया था कि फान वंश का कोई यदि विद्रोहियों में शामिल न हुआ तो उसका सिर काट दिया जायेगा इसलिए वह विद्रोहियों में भरती हो गया था, यद्यपि वह उनमें मिलना न चाहता था।

वह असहायों की सहायता तो करता पर लूट मार के लिए न जाया करता। यह समझ कि वह डरपोक था, लोग उसे अन्धा पानी का साँप कहकर चिढ़ाने लगे।

इधर जब तहसीलदार फेन्ग अपनी पत्नी और यूमे नाम की अपनी सोलह वर्ष की लड़की के साथ यूचो जा रहा था, तो विद्रोहियों ने उसपर हमला किया और उसका सब कुछ लूट लिया और इस लूट खसोट में न जाने यूमे कहाँ चली गई। उसके पिता ने जगह-जगह उसकी खोज की, फिर वह खोज करता कराता थक गया। दुखी हो वह अपने रास्ते चला गया।

यूमे भाग तो सकती न थी, इसलिए वह विद्रोहियों के यहाँ दुखी रहने लगी। इस स्थिति में फान शिचौ ने उसको देखा और उसपर उसको तरस आई। जब उसको पता लगा कि वह एक कर्मचारी की लड़की थी, तो वह उसकी आँखों की पट्टी खोलकर, उसको अपने घर ले गया।

"मैं विद्रोही नहीं हूँ। हमारे वंशवालों के दबाव के कारण में इनमें हूँ। जब सरकार पुनःस्थापित होगी, तो फिर मैं मामूली नागरिक हो जाऊँगा। अगर

तुम मुझसे शादी करने को मान जाओ तो मुझ सा सौभाग्यशाली न होगा।" फान ने यह बहुत समझाकर धीमे-धीमे कहा। यद्यपि वह उससे विवाह न करना चाहती थी मगर क्योंकि वह उनके चुङ्गल में थी, इसलिए वह मना भी न कर सकी। यह सुन सरदार फान भी खुश हुआ। विवाह से पूर्व उसने वर-वधु को बहुत से उपहार दिये। उसने उनको दो जुड़े हुए शीशे भी दिये। एक पर "नर बत्तख" लिखा था और दूसरे पर "मादा बतख" फान के कुल वाले सब विवाह में सम्मिलित हुए। उनकी गृहस्थी भी आदर्श सी थी। वे बड़े सुख से रहने लगे।

सरकारी सेनाओं ने तातारों को जीत लिया, उसके बाद देश में शान्ति स्थापित हुई। सेना को विद्रोहियों का दमन करने के लिए भेजा गया। एक लाख सैनिकों को लेकर राजकुमार हान शि चुन्ग ने विद्रोहियों पर आक्रमण किया। चियेन्चो नगर घेर लिया गया।

हान, जब तहसीलदार फेन्ग उत्तर में था, तभी उसको जानता था। क्योंकि फान यूची में रहता था



इसलिए वह प्रान्त वह जानता था। हान ने उसको अपनी सेना में एक अधिकारी नियुक्त किया।

नगर में बड़ी भयङ्कर स्थिति थी। सरदार फेन्ग ने भाग जाना चाहा। उसने बहुत कोशिश की। सफल न हुआ। यूमे ने अपनी पति से कहा- "स्वामी, सरकारी सेना किसी भी समय शहर में आ सकती है। क्योंकि आप विद्रोहियों में हैं, इसलिए आप छोड़े नहीं जायेंगे। अगर उन्होंने मेरे सामने आपको फाँसी दी, तो मैं देख न पाऊँगी। मैं पहले ही आत्महत्या कर लूँगी। जिस दिन विद्रोहियों ने मुझे पकड़ा

था, अगर आप उस दिन मेरी रक्षा न करते, तो मैं उसी दिन आत्महत्या कर लेती। यह कहते ही तलवार निकालकर, उसने अपने को मारना चाहा। परन्तु फान ने उसको यह न करने दिया। "मैं सोच समझकर तो विद्रोहियों में शामिल हुआ न था। पर कौन इस बारे में सोचेगा? मुझे मरना ही होगा। पर तुम क्यों मरना चाहती हो? तुम्हारे पिता अधिकारी हैं। हान राजकुमार व उसके अनुचर तुम्हारी तरह उत्तर से आये हैं। तुम्हारी भाषा बोलते हैं। कोई न कोई तुम्हारे बारे में तुम्हारे पिता तक खबर पहुँचायेगा ही। प्राण बहुमूल्य हैं। क्यों उन्हें यों खो रहे हो?"

"अगर मौत न भी हुई तो मैं दुबारा शादी ती हरगिज न करूँगी। सतीत्व खोने की अपेक्षा, तो प्राण खोना ही अच्छा है।" उसने कहा।

"अगर भगवान की दया से मैं जिन्दा रहा तो मैं कसम खाता हूँ कि में फिर विवाह नहीं करूँगा।" फान ने कहा।

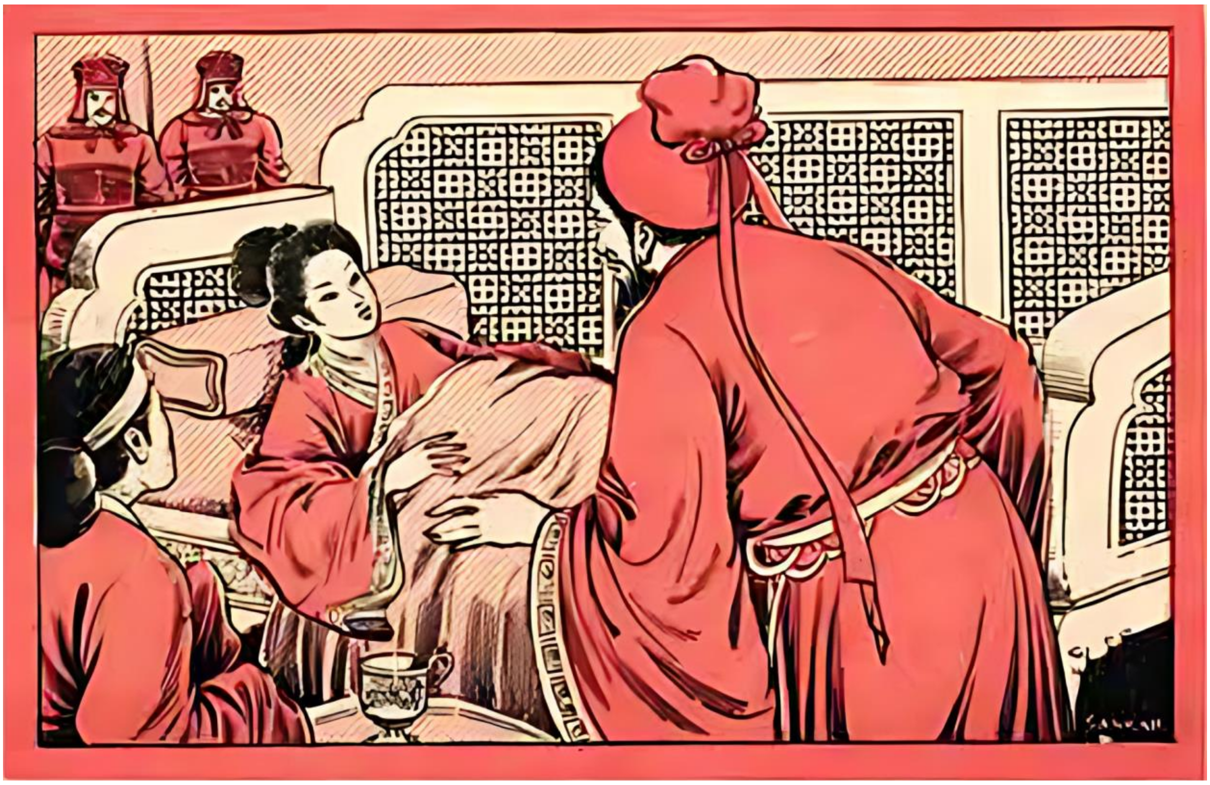
"आपने मुझे जुड़े शीशे उपहार में दिये थे। उनमें से एक एक हम अपने पास रखेंगे। अगर वे दोनों मिल गये,



तो समझ लीजिए कि हम दोनों मिल गये हैं।" यूमे ने कहा।

इसके एक महीने बाद हान की सेना ने चियेंचो में प्रवेश किया। सरदार फान ने अपने कार्यालय में आग लगा दी और उसी में जलकर स्वाहा हो गया। विद्रोहियों ने अपने को समर्पित कर दिया। फान के वंशजों को मृत्यु का दण्ड दिया गया और बाकी को छोड़ दिया गया। यूमे ने समझा कि उसके पति का जीवन समाप्त हो गया था। वह एक खाली घर में गई और उसकी छत की गड्डर से फाँसी लगाकर लटक गई। परन्तु उसमें अभी आयु थी।

थोड़ी देर बाद उसका पिता, कुछ सैनिकों के साथ उस तरफ जा रहा था। अन्दर किसी भी को लटकता देखा उसे नीचे उतरवाया, परन्तु उसको होश आने में बहुत देर लगी। कुछ भी हो पिता, पुत्री ने मिलकर खुशी के आँसू बहाये। उसने अपने पिता से कहा कि कैसे फान ने विद्रोहियों से उसको बचाया था और कैसे उसने उससे विवाह किया था। परन्तु फेन्ग ने कुछ भी न कहा। विद्रोहियों के दमन के बाद, हान राजकुमार, अपने सरदारों और फेन्ग के





साथ राजधानी वापस चला गया। सम्राट ने सबका यथोचित सत्कार किया।

एक दिन फेन्ग ने अपनी पत्नी से अपनी लड़की के भविष्य के बारे में बातचीत की। वह अभी छोटी थी, इसलिए पति-पत्नी ने उसको शादी के लिए मनाने का निश्चय किया। परन्तु वह इसके लिए बिल्कुल न मानी।

"परिस्थितिवश, तुमने उससे विवाह किया। वह अब मर गया है। तुम स्वतन्त्र हो! अब भी तुम उसी के लिए क्यों रोती धोती हो?" पिता ने पूछा।

"मेरा पति सोच समझकर विद्रोहियों में शामिल नहीं हुआ था। उसने, जहाँ तक बन सका, दूसरों की सहायता की थी। मैं बौद्ध भिक्षुणी बन जाऊँगी और आपकी सेवा करती रहूँगी। अगर आपने दूसरी शादी करने के लिए जिद पकड़ी, तो मैं आत्महत्या कर लूँगी।" यूमे ने रोते हुए कहा। इसके बाद, माँ-बाप और जिद न कर सके।

इस बीच फेन्ग, फेंग्चो नगर में सैनिक शिविर में उपनायक होकर गया। एक दिन क्रांगचो नगर से एक उपनायक जिसका नाम हू-चेग्शिन था फेन्ग को देखने आया। दोनों में सेना सम्बन्धी विषयों पर बहुत देर बातचीत चलती रही। फिर वह चला गया।

यूमे ने पीछे के कमरे से झाँक कर देखा। पिता के अन्दर आते ही उसने पूछा-" वे कौन हैं पिताजी? गजब है, उनकी आवाज़ मेरे पति की आवाज़ की तरह है।"

"जब चियेन्वो का पतन हुआ तभी फान वंश के सब लोग मरवा दिये गये थे। इसका नाम हू है। सरकारी कर्मचारी हैं।

तुम्हारा अनुमान गलत है। अगर तुमने इस तरह की बातें नौकरों के सामने की तो वे तुझे देख हँसेगे।" पिता ने कहा। यह सुन वह इतना शर्मिन्दा हुई कि वह आगे कुछ न कह सकी।

फिर छः महीनों बाद, हू-चेग्शिन कोई खबर लेकर फेन्ग के पास आया। इस बार भी उसे बिल्कुल अपने पति के समान पा यूमे बड़ी हैरान रही। उसने अपने पिता से यों कहा-"मैंने, इस संसार के सब सुख तज दिये हैं। मैं सन्यासिनी हूँ। यह न समझना कि मैं किसी भ्रान्ति में बात कर रही हूँ। जो आदमी क्रांगचो से आया है, हो न हो, वह मेरा पति ही है। उसे भोजन पर बुलाकर पूछकर तो देखिये। मेरे पति को "पानी का साँप" कहकर चिढ़ाया करते थे। हम दोनों के पास जुड़े शीशे हैं। उनके द्वारा उनको पहचाना जा सकता है।" पिता इसके लिए मान गया।

अगले दिन उसने हू को खाने पर बुलाया। फेन्ग और हू जब एकान्त में बातें कर रहे थे, तो फेन्ग ने पूछा-



"आपका नाम 'पानी का साँप' भी तो है? मैं आपके बारे में सब कुछ जानता हूँ। आप बिना तकल्लुफ के मुझसे बातें कर सकते हैं।" हू तुरन्त उनके पैरों पर पड़ा। "मुझ पर दया कीजिये।" उसने कहा। फिर उसने फेन्ग से अपनी सारी कहानी कही। जब फान के वंशवालों को फाँसी दी गई, तो किसी ने इसको अच्छा समझ, इसको बचाया था। फिर उसने अपना नाम बदल लिया। सेना में भरती हो गया। और अपने पराक्रम के आधार पर उप-सेना नायक भी बन गया।

"तुम्हारी पत्नी का क्या नाम है? वैसे तुम्हारी पत्नियाँ हैं कितनी?" फेन्ग ने पूछा।

"जब में विद्रोहियों के साथ था, तब मैंने एक कर्मचारी की लड़की की रक्षा करके उससे शादी की थी। एक वर्ष बाद जब नगर का पतन हुआ, तो हम अलग हो गये। पर हम दोनों ने शपथ की थी कि फिर हम शादी न करेंगे। मैंने फिर शादी न की।" हू ने कहा।

"हमारे पास जुड़े शीशे थे, जिनमें से एक पर 'नर बत्तख' और दूसरे पर 'मादा बत्तख' लिखा था। उनमें से एक एक लेकर, हम निकल पड़े। मेरा शीशा यह है। में इसको हमेशा अपने साथ रखता हूँ।" हू ने अपना शीशा दिखा कर कहा।

फेंग ने अपनी जेब में से दूसरा शीशा निकालकर उससे जोड़ कर देखा।

यूमे ने जैसा कि उस दिन कहा था जैसे ही दोनों शीशे मिले, वैसे ही पति पत्नी भी मिले। अपनी लड़की और दामाद के पुनर्मिलन की खुशी में फेन्ग ने बड़ी दावत दी।

उस वंश में वह जुड़ा शीशा कई पीढ़ियों तक सुरक्षित रखा गया।





[४]

चेनगेज़ खान के वंशज जब मरते, तो उनके शवों को अल्ताई पर्वत के पास गाड़ा जाता। अगर वे उस पर्वत से सौ दिन के सफर की दूरी पर भी होते, तो वे वहाँ ले जाये जाते। जो कोई रास्ते में मिलता उसको मार दिया जाता और कहा जाता-"जाओ, दूसरे लोक में बड़े खान की सेवा करो।" इसी तरह रास्ते में घोड़े भी मार दिये जाते। मोन्ग खान जब मरा, तो उसके शव के सामने बीस हजार आदमी आये और उन सब को मार दिया गया। यह सच है। यह भी परम्परा थी कि जब बड़ा खान मरता तो उसके अच्छे घोड़े भी उसके साथ गाड़ दिये जाते। तातारों का विश्वास था कि परलोक में वे सब उसके उपयोग में आयेंगे।

इस सिलसिले में तातारों के बारे में कुछ ऐसी बातें हैं, जिनका जानना ज़रूरी है। वे हमेशा एक जगह नहीं रहते थे। सरदियों में गरम जगहों पर, गरमियों में ठण्डी जगहों पर रहा करते। उनके घर बड़े हल्के होते थे। तख्तों से गोल गोल बना लिए जाते। चार पहियों की गाड़ियों पर वे एक जगह से दूसरी जगह ले जाये जा सकते थे। वे बरसात में गाड़ियों पर सफर किया करते। इन गाड़ियों में एक



बून्द पानी न गिरता। वे इन्हीं में रहते। इन्हीं में अपनी रसोई वगैरह भी करते।

तातार स्त्रियाँ ही रसोई करती है, खरीद-फरोश्त भी। मर्दों का काम शिकार खेलना, युद्ध करना आदि है। वे घोड़ी और कुत्तों का माँस भी खाते हैं। वे घोड़े का दूध भी पीते है। एक एक कुटुम्ब में दस बीस आदमी भी रहते हैं। परन्तु उनमें कोई ईर्ष्या या द्वेष नहीं होता। सब बड़े हिल-मिलकर रहते हैं। बच्चे सबकी सम्पत्ति माने जाते हैं। अगर तातार पालन-पोषण कर सकें तो सैकड़ों स्त्रियों से शादी भी कर सकते हैं।

वे सर्वेश्वर का ध्यान करते हैं। उनका विश्वास है कि ये सर्वेश्वर उनके शरीर और बुद्धि को बढ़ाता है। वे घरों में देवताओं की पूजा करते हैं। भोजन करने से पहले वे उन देवताओं को भोजन नैवेद्य के रूप में देते हैं। वे बहुत बहादुर और साहसी होते हैं। वे बड़े से बड़े कष्ट झेल लेते हैं। वे घोड़ों पर से बिना उतरे, बिना खाये पिये कई दिन तक युद्ध कर सकते हैं। युद्धभूमि से भाग जाना उनके लिए पराजय नहीं है। भागते भागते पीछा करनेवाले का निशाना लगाकर, वे बाण से मार देते हैं। इस तरह शत्रुओं पर यकायक वे युद्ध में अन्तिम विजय प्राप्त करते हैं। इसी कारण वे युद्ध करके सारी दुनियाँ को हरा सके। वे जब दिग्विजय के लिए निकलते हैं, तो साथ रसद वगैरह नहीं ले जाते हैं। अगर कहीं कुछ खाने को न मिला, तो अपने घोड़ों की धमनियों से खून निकालकर खून पीते हैं। उनकी मुख्य सम्पत्ति, घोड़े, ऊँठ, बैल, गौ, भेड़ हैं।

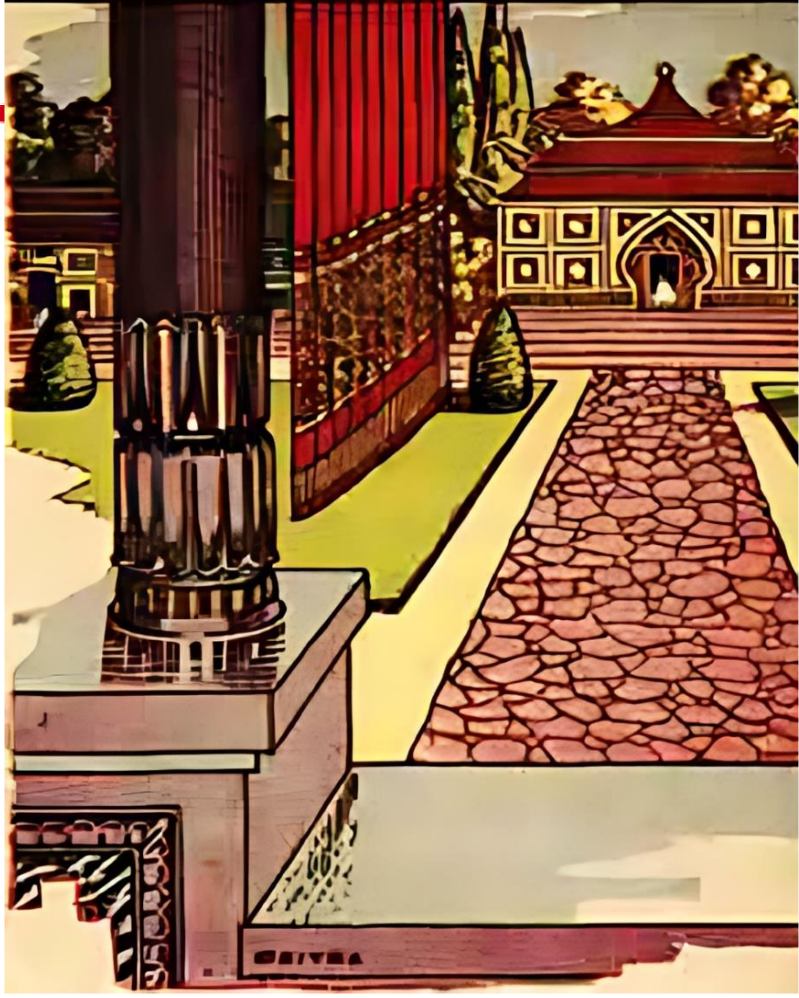
तातारों में एक परम्परा है। यदि एक की लड़की, और एक का लड़का मरता है, तो दोनों की आत्माओं का

शास्त्रोक्त रीति से विवाह करके, उनके माँ बाप समाधि बनाते हैं। दावतें भी दी जाती हैं। कई पीढ़ियों तक यह सम्बन्ध चलता है।

काते के रास्ते में बढ़े खान के बहुत-से पड़ाव हैं। चगन नोर नामक जगह पर बड़े खान का एक राजमहल है। यहाँ बहुत-सी नदियाँ, झीलें हैं, उनमें हँस, और तरह तरह के शिकार के पक्षी मिलते हैं। शिकार के लिए बड़ा खान यहाँ आकर कभी कभी रहता है।

शान् तु नामक नगर में एक और महल है। इसको कुविलाय खान ने बनवाया है। इस महल को सङ्गमरमर और और कीमती पत्थरों से बनाया गया है। यह अच्छी तरह अलंकृत किया गया है। इस महल के पीछे एक बड़ा उद्यान है। उसमें बड़े खान ने बाँसों से एक और मकान बनवाया हुआ है। यह भी बड़ा आश्चर्यजनक है। चाहो तो इसे खोलकर फिर बनाया जा सकता है।

जून, जुलाई, और अगस्त के महीने वहाँ गरमियों के महीने हैं। ये तीनों महीने बड़ा खान, शंग तु में बिताता



है। अगस्त २४ को जब बड़ा खान जाने लगता है, तो बांसोंवाला मकान खोल दिया जाता है। बड़ा खान प्रति वर्ष २४ अगस्त को ही जाया करता। यह ज्योतिषियों द्वारा निर्णीत मुहूर्त था।

बड़े खान के पास सफेद घोड़े, जिनको पवित्र माना जाना है, बहुत-से थे। उनके शरीर पर रत्ती भर भी दाग न होता। उनमें दस हज़ार घोड़ियाँ ही थीं।

कुबिलाय खान के पास तिब्बत और काश्मीर के तान्त्रिक थे। कहते हैं, ये

अपनी तन्त्रशक्ति से बड़े खान पर वर्षा न होने देते थे। वे हमेशा अपने शरीर पर भस्म लगाये रखते। मार्को ने यह भी मालूम किया कि वे जबर्दस्ती मारे गये लोगों की लाशें ले जाकर, छोटे मोटे देवताओं की पूजा किया करते।

कुविलाय खान के पास कुछ और मान्त्रिक थे, जिनको "भिख्खु" कहा जाता था। बड़ा खान भोजन के लिए एक ऊँची वेदी पर बैठा करता। वह जिस तख्त पर बैठता उस तख़्त से दस अंगुल दूरी पर, फर्श पर लोटों में दूध, शराब, व अन्य पेय रखे जाते। वे "भिख्खु" कुछ ऐसा जादू करते कि वे लोटे, स्वयं यानि बिना किसी के उठाये बड़े खान के पास चले जाते। दस हज़ार आदमियों के सामने वे अपनी शक्तियाँ दिखाया करते। मार्को का कहना है कि यह असत्य नहीं है।

ये "भिक्खू " जब देवताओं के लिए कोई प्रिय दिन आता तो उस दिन बड़े खान की सहायता से जोर-शोर से उत्सव मनाया करते। वे अपने अपने पद के अनुसार विवाह भी किया करते। एक और तरह के भी सन्यासी थे, जिनको "सियेन-सिन्ग" कहा जाता था। वे सिर मुण्डाकर रहते। केवल चावल का माँड़ खाकर जीते। ब्रह्मचर्य का पालन करते और नीले रङ्ग के वल्कल वस्त्र धारण करते। चटाइयों पर सोते। ये शायद शक्ति पूजक थे। क्योंकि उनके आराध्यों के नाम स्त्रियों के ही हैं। मार्को ने सोचा कि उतना कठिन जीवन व्यतीत करनेवाले संसार में और कहीं न थे।





बाली ने सुग्रीव से राज्य ले लिया। उसकी पत्नी का भी उसने अपहरण किया। तब सुग्रीव हनुमान को साथ लेकर राम-लक्ष्मण के पास यह जानने के लिए गया कि वे उसकी मदद करते हैं कि नहीं। वे किष्किन्धा से कुछ दूरी पर मिले। जब सुग्रीव ने देखा कि राम का बाण सात पेड़ों को चीरकर उनके पास आ गया था, तो उसको विश्वास हो गया कि वे उसकी मदद कर सकते थे।

चारों किष्किन्धा वापस आये। बाकी तीनों को सुग्रीव ने कुछ पीछे छोड़ दिया। फिर जाकर वाली को युद्ध के लिए ललकारा। बाली सुग्रीव की ललकार सुनकर जानेवाला था कि तारा ने उसको रोका। उसने कहा, यदि सुग्रीव एक बार हारकर फिर वापस लड़ने आया है, तो ज़रूर कोई न कोई कारण है। मन्त्रियों से सलाह-मशवरा करके जाना अच्छा होगा। पर बाली तो ऐसा था कि वह इन्द्र और शिव की भी परवाह न करता था। वह सुग्रीव से युद्ध करने आया। दोनों काफी देर तक लड़ते रहे। फिर बाली ने सुग्रीव पर ऐसी चोट की कि वह नीचे गिर गया। हनुमान ने अपने सरदार की बुरी हालत देखी और राम को उनके दिये हुए वचन का स्मरण कराया। राम ने बाली पर एक बाण मारा। उस चोट से बाली मूर्छित हो गया। जब उसको होश आया तो उसने बाण निकाल कर देखा, उस पर राम लिखा था, उसने राम से पूछा- "राम, मुझे इस तरह मारना क्या अधर्म नहीं है?"

"पशुओं को आड़ से मारना अधर्म नहीं है। जो अपने छोटे



भाई की पत्नी को अपनी पत्नी बनाये, वह मनुष्य नहीं पशु है।" राम ने कहा। बाली ने प्राण छोड़ते हुए अपने लड़के अङ्गद को सुग्रीव को सौंपा। अपनी सुवर्ण माला भी उसने भाई को दे दी। हनुमान का दिया हुआ पानी पीकर वह मर गया।

राम ने सुग्रीव को किष्किन्धा का राजा बनाया। इसके बदले में सुग्रीव ने सीता का पता ठिकाना मालूम करने के लिए अपनी वानर सेना को चारों दिशाओं में भेजा। अङ्गद और हनुमान दक्षिण दिशा की ओर गये। वहाँ उन्होंने मालूम किया कि सीता लङ्का में थी। हनुमान समुद्र पार करके लङ्का पहुँचा।

हनुमान ने सीता के लिए सारी का नगरी खोजी। वह नगरी उसको स्वर्ग के समान लगी। पर कहीं सीता का पता न था। उसे यह खेद रहा कि मूर्ख रावण इतने सुन्दर नगर को नाश कराने पर तुला था। हनुमान, जहाँ स्त्रियाँ रह सकती थीं-घाट, प्रसूति गृह, मण्डप, मकान, बाग वगैरह सब खोज आया। आखिर वह राम की दी हुई अंगूठी लेकर एक वन में गया।

वहाँ सीता, राक्षस स्त्रियों के बीच बैठी थी। जब से रावण उसे लङ्का लाया था, तब से उसका जीना मुश्किल हो गया था। रोज़ रावण का आना और उससे विवाह करने के लिए कहना उसके लिए असह्य था। पर वह इसी भरोसे जीवित रही कि किसी न किसी दिन, तो राम के बाण उसकी रक्षा करेंगे ही।

इतने में हनुमान ने देखा कि रावण मशालचियों के पीछे आ रहा था। वह एक अशोक वृक्ष पर चढ़ गया। वहाँ बैठा बैठा सब कुछ देखने लगा।

"सीता, अभी राम का ही स्मरण कर रही है। उस मानव के लिए सब सुखों का त्याग करके मेरे भी वश में नहीं आ रही है। और तो और वह मेरी तरफ इस तरह देख रही है, जैसे किसी हरिण ने शेर देख लिया हो।" रावण ने सोचा।

"पगली सीता, यह तपस्या अब समाप्त करो। कब तक उस राम से प्रेम करती रहोगी, जो तुम्हारी रक्षा भी नहीं कर सकता। यह मेरी तरह तुम्हें प्रेम भी नहीं कर सकता।" रावण ने सीता से कहा।

जब हनुमान के कान में यह पड़ा कि राम असमर्थ था, तो उसे बड़ा गुस्सा आया। उसने सोचा कि या तो मैं रावण को मार दूँगा, नहीं तो खुद मारा जाऊँगा। जब रावण ने पूछा-" क्या कहती हो?" तो सीता ने कहा- "मैं तुम्हें शाप देती हूँ।" शायद पतिव्रत धर्म का प्रभाव था कि रावण को ऐसा लगा, जैसे उसके शरीर से लपटें निकल रही हो। वह स्नान के लिए चला गया।

तुरन्त हनुमान पेड़ पर से उतर आया। सीता के पास जाकर उसने कहा कि मैं राम का दूत हूँ और



राम उसके लिए चिन्तित थे। पहले तो सीता ने विश्वास नहीं किया, उसने सोचा कि यह भी कोई राक्षस माया होगी। हनुमान ने उसको अंगूठी दिखाई। अपना नाम बताया। फिर बाली वध और सुग्रीव की मैत्री के बारे में भी सीता को पूरा विवरण दिया। उसने बताया कि राम जरूर लङ्का आकर रावण का वध करेंगे।

"क्या यह सब सच है! सपना तो नहीं है?" सीता ने पूछा।

हनुमान ने कहा-"हाँ, बिल्कुल सच है। कोई सन्देह नहीं है।"



"तो जाकर राम को मेरी हालत बताओ। पर इस तरह कहना कि ये सुनकर शोकातुर न हो।" सीता ने कहा।

"अब मुझे रावण को अपने आने के विषय में बताना होगा। इसलिए इस सुन्दर बन का नाश करके उसका घमण्ड चूरचूर करूँगा।" हनुमान ने सोचा। उसने किया भी यही। जिसमें महारानी मन्दोदरी भी एक फूल तक नहीं तोड़ सकती थी, वैसे अशोक वन को हनुमान ने नष्ट कर दिया। शंकुकर्ण नामक व्यक्ति के यह खबर देते ही रावण ने उस बन्दर को पकड़ लाने लिए आवश्यक सेना भेजी। हज़ार सैनिक हनुमान के हाथ मारे गये। फिर अक्ष के साथ पाँच सेनापति गये। उनको भी हनुमान ने मार दिया। यह सुन जब रावण ने स्वयं उस बन्दर को पकड़ने के लिए जाना चाहा, तो पता लगा कि इन्द्रजित गया हुआ था।

हनुमान थोड़ी देर तक इन्द्रजित से लड़ता रहा; फिर उसने ही अपने को सौंप दिया, क्योंकि वह रावण को देखना चाहता था। रावण को यह देख आश्चर्य हुआ, जो देवता तक करने की हिम्मत न करते थे, वह एक बन्दर ने कर दिया था।

"जब मैंने कैलाश तक को हिलाकर शिव से वर लिया था, तब पार्वती और नन्दी ने मुझे शाप दिया था। कहीं वह शाप इस बन्दर के रूप में तो नहीं आया है?" यह सोच रावण ने उस बन्दर को अपने सामने लाने के लिए कहा। और विभीषण को भी बुलवाया।

विभीषण आया। हनुमान को भी बाँधकर लाया गया। रावण ने पूछा- "तुम कौन हो?"

हनुमान ने कहा-"में हनुमान हूँ। वायुदेव का अञ्जना देवी

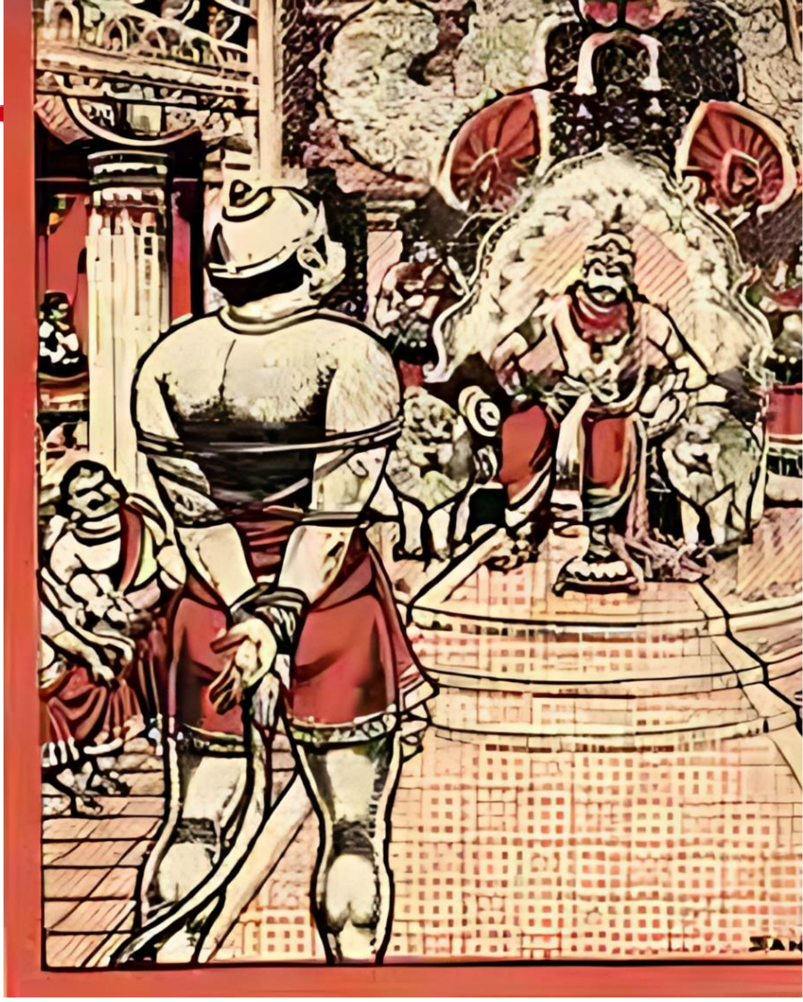
से पुत्र हूँ। राम ने मुझे यहाँ भेजा है। राम की आज्ञा सुनाता हूँ।"

"राम की आज्ञा" सुनते ही रावण खौल उठा। "इस बन्दर को मार दो।" परन्तु विभीषण ने कहा-"चाहे दूत कुछ भी करें उसको दण्ड नहीं देना चाहिये। कुछ भी हो, पहले राम का सन्देश सुन लिया जाय, फिर सोचा जा सकता है कि क्या किया जाये।"

रावण जब इसके लिए मान गया तो हनुमान ने राम का सन्देश यों सुनाया-"चाहे तुम कितने ही सुरक्षित स्थान पर रहो, चाहे शङ्कर की ही सहायता लो, दुर्गम पाताल में ही जाओ पर मेरे बाण तेरे अङ्ग अङ्ग काटकर तुम्हें यमलोक भेजेंगे।"

रावण ने अट्टहास करके कहा-"मेरे अत्रों से देवता भी घबरा गये थे। सब राक्षस राजा मेरे आधीन हैं। कुबेर से भी मैंने पुष्पक विमान छीन रखा है। राम, जो केवल मनुष्य मात्र है, मेरा क्या बिगाड़ सकता है?"

"जब इतने बड़े हो, तो सीता को धोखा देकर चुराकर क्यों लाये हो?"



हनुमान ने पूछा। यह सुन विभीषण खुश हुआ। "क्या तुम मेरे शत्रुओं के साथ मिलने की सोच रहे हो?" रावण ने अपने भाई से पूछा।

"नहीं। पर सीता को वापस भेज दो। राक्षस कुल का नाश न करवाओ।" विभीषण ने कहा। पर रावण ने उसकी सलाह न सुनी। वह शेखियाँ मारने लगा।

"रावण, अब तेरा समय समीप आ गया है। तुमने राम को समझ क्या रखा है? वह सम्पूर्ण विश्व का नाथ है।" हनुमान ने कहा। रावण ने आज्ञा दी कि



क्योंकि इस बन्दर ने मुझे मेरे नाम से पुकारा है, इसलिए इसको मार दो। पर यह याद करके कि वह दूत था, उसने कहा कि उसकी पूँछ में आग लगाकर उसको भगा दो।

उसने हनुमान से राम को यह सन्देश पहुँचाने के लिए कहा। "मैंने तुम्हारी पत्नी का अपहरण करके तुम्हारा अपमान किया है। अगर धनुर्विद्या में प्रवीण हो, तो मुझ से युद्ध करो।"

हनुमान, रावण को एक बार और सावधान करके जब चला गया, तो विभीषण ने अपने भाई को समझाया। रावण को यह बुरा लगा। यह कहकर कि वह शत्रु था, उसे लङ्का से जाने के लिए कहा। विभीषण यह सोच कि राक्षस कुल का कोई न कोई तो जीवित रहेगा, चला गया। रावण नगर की रक्षा करने का प्रयत्न करने लगा।

हनुमान के वापस आते ही राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, और उसकी वानर सेना के साथ, समुद्र के तट पर पहुँचे। "मैं नदी, पहाड़, जङ्गल, पार करके समुद्र के किनारे आ पहुँचा हूँ। पर अब मेरे बाणों और शत्रु के मध्य यह समुद्र आ पड़ा है।" राम ने कहा।

इतने में आकाश मार्ग से विभीषण आया। उसको पहचानते ही हनुमान ने राम से कहा-"वह जो आ रहा है, वह विभीषण है। भाई ने भगा दिया है। आश्रय के लिए आ रहा है। राम के भेजने पर लक्ष्मण ने उसका स्वागत किया। सुग्रीव को सन्देह हुआ। वह राक्षसों की माया जानता था। परन्तु हनुमान ने कहा कि विभीषण की अच्छाई पर सन्देह करने की आवश्यकता न थी। उसने लङ्का में ही अपने भाई का विरोध किया था।

राम ने विभीषण से पूछा कि समुद्र पारकर लङ्का कैसे पहुँचा जा सकता है। "अगर समुद्र रास्ता न दे, तो उस पर आप अपने अस्त्र का उपयोग कीजिये।" विभीषण ने कहा। जब राम ने बाण चढ़ाया तो वरुण स्वयं आया। राम को नमस्कार करके उसने पूछा-"आप क्यों मुझ पर यों क्रुद्ध हैं? आपकी क्या आज्ञा है?"

"लङ्का जाने के लिए हमें रास्ता चाहिये।" राम ने कहा।

तुरन्त समुद्र का जल मार्ग देने के लिए विभक्त-सा हो गया। उस मार्ग से राम, तथा उनके अनुयायी लङ्का में पहुँच गये।

इतने में नील ने दो नये बन्दरों को लाकर राम के सामने उपस्थित किया। विभीषण ने उनको पहचानकर कहा कि वे शुक और सारण नाम के राक्षस थे। उन्होंने कहा कि वे शरण माँगने आ रहे थे। पर विभीषण जानता था कि वे रावण के विश्वासपात्र नौकर थे। इसलिए उसने राम से कहा कि उनको दण्ड दिया जाये।

"इनको दण्ड देकर क्या काम बनता है? क्या इतने से रावण मर जायेगा?"





राम ने यह कहकर उनको छुड़वा दिया। लक्ष्मण के कहने पर उन गुप्तचरों को सारी वानर सेना में दिखाया गया। फिर उनके द्वारा राम ने रावण के पास यह सन्देश भेजा-"मेरी पत्नी को चुराकर तुमने यह युद्ध अपने सिर पर लिया है। मैं आया हूँ। पर अभी तुम मेरी नजर में नहीं आये हो?" यह सन्देश लेकर गुप्तचर चले गये।

दोनों पक्षों में युद्ध शुरू हो गया। राक्षसों का नाश आरम्भ हुआ। कुम्भकर्ण आदि बड़े बड़े योद्धा मारे गये। मन्त्रियों ने रावण को सलाह दी कि युद्ध छोड़कर वह सीता को, राम को दे दे। परन्तु सीता पर उसका मोह बना रहा। उसने विधुजिह्वा नाम के व्यक्ति को बुलाकर आज्ञा दी कि वह राम और लक्ष्मणों के मुखौट बनवाकर लाये।

राक्षस स्त्रियों के बीच में सीता बैठी हुई थी। उसे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि उसके पति लङ्का आये हुए थे। इतने में रावण ने आकर कहा-"तुम अपनी ज़िद छोड़ो, राम और लक्ष्मण युद्ध में मारे जानेवाले हैं।"

इस समय विद्युजिहा ने राम और लक्ष्मण के मुखौट लाकर रावण को दिये। उनको देखते ही सीता मूर्छित हो गई। जब उसको होश आया, तो वह शोक करने लगी। उसने कहा- "जिस तलवार से राम को मारा है, मुझे भी मार दो।"

"अरी पगली, इन्द्रजित ने राम और लक्ष्मण को मार दिया है। अब तेरा कौन आसरा है?" रावण सीता से यह पूछ रहा था कि "राम राम" चिल्लाता चिल्लाता भागता भागता कोई आया।

"उस दुष्ट ने क्या किया है?" रावण ने खिझते हुए पूछा।

"क्या कहूँ महाराज! इन्द्रजित को उसने मार दिया है।" राक्षस ने कहा। तुरन्त रावण मूर्छित हो गया। फिर जब उसको होश आया, तो वह कहने लगा-"इस सीता के लिए ही तो मैंने अपनों को मरवा लिया। इतना सब होने के बाद सीता किस काम की? तीनों लोकों का अधिकार किस काम का?"

इतने में एक दूत ने आकर कहा कि राम अपनी सेना लेकर लङ्का नगरी का ध्वंस कर रहे हैं। रावण ने राम का मुकाबला करने से पहले सीता को मारने का निश्चय किया। परन्तु दूसरे राक्षसों ने उसे रोककर कहा कि मारने का वह समय न था। न उसको मारने से कोई काम ही बनता था। सीता को यह बताकर कि वह राम को मार देगा, रावण रथ पर सवार होकर चला गया।

राम और रावण में, राक्षसों और वानरों में युद्ध हुआ। रावण का कोई भी वाण राम का कुछ न बिगाड़ सका। राम खड़े खड़े युद्ध कर रहे थे। रावण ने उनपर अपना रथ छोड़ दिया। उस समय इन्द्र ने अपने सारथी मातली के द्वारा एक रथ भेजा। राम उस पर सवार हुए।



उन्होंने ब्रह्मास्त्र छोड़ा। ब्रह्मास्त्र ने जाकर रावण को मार दिया और फिर वह वापस आ गया।

राम ने विभीषण को लङ्का का राजा घोषित किया। इतने में जब उनको मालूम हुआ कि सीता उनके पास आ रही थी, तो विभीषण से कहा- "क्योंकि वह रावण के पास रही है, वह अपवित्र हो गई है। इक्ष्वाकु वंश पर कलङ्क लगाया है उसने। उसे मेरे पास न आने दो।" यद्यपि वह सीता को देखना चाहते थे, पर उन्होंने अपनी इस इच्छा को व्यक्त न होने दिया।

राम की कही बात सीता ने सुनी। उसने लक्ष्मण से कहा कि वह एक चिता तैयार करे और राम से उसमें प्रवेश करने की अनुमति ले। लक्ष्मण ने राम से यह बात कही। राम मान गये। लक्ष्मण हैरान हो गया। उसने हनुमान से कहा-"अगर तुम कर सको तो भाई की आज्ञा का पालन करो।"

हनुमान ने आश्चर्य से पूछा-"क्या आपका भी यही ख़याल है?" लक्ष्मण ने कहा-"हमारे ख्यालों का कोई मतलब नहीं है। हमें भाई की आज्ञा का पालन ही करना होगा।"

जब सीताने अग्नि प्रवेश किया तो लक्ष्मण ने आश्चर्य से, "अरे अरे, आपका सारा कष्ट व्यर्थ गया। सीता अग्नि में इस तरह प्रवेश कर रही हैं, जिस तरह हँस तालाब में करता है।

"उसे रोको, रोको...." राम ने कहा।

परन्तु सीता अग्नि में प्रवेश कर ही गई। किन्तु अग्नि ने उसका कुछ न बिगाड़ा। बल्कि वह इस तरह चमकने लगी जैसे सोना आग में पिघलाने के बाद चमकता है।

अग्निहोत्र प्रत्यक्ष होकर, उसका हाथ पकड़कर राम के पास ले गया। यह अनिन्दनीय, अकलङ्क, लोक पूज्या है। तुम नारायण हो और यह लक्ष्मी है।"

"मैं उसकी पवित्रता से परिचित हूँ। संसार को इसका परिचय देने के लिए ही मैंने यह किया है।" राम ने कहा।

अग्निदेव ने स्वयं सीता और राम का पट्टाभिषेक किया। उसी समय भरत और शत्रुघ्न जनता को लेकर वहाँ आये। अग्निदेव ने इन्द्र आदियों के आशीर्वाद राम को दिये।



मूर्ख

किसी देश में सात भाई थे। जब तक उनका पिता जीवित रहा, तब तक खेती करते अपने वे गाँव में ही रहे। फिर वे आज़ाद-से हो गये। एक दिन कुछ काम न था। सातों आसपास के गाँव देखने निकले। दिन भर घूमते रहे। जो कुछ उन्होंने देखा, उन्हें आश्चर्यजनक-सा लगा। अन्धेरा होने के बाद वे सातों घर की ओर चले। रास्ता कुँए के पास से जाता था। कुँए के बाद एक ने सबको गिनकर देखा, कहा- "सातवाँ कहाँ है?" उसने अपने को नहीं गिना था।

इस तरह सब ने गिना और अपने को छोड़ दिया। आखिर यह तय हुआ कि उनमें से एक कुँए में गिर गया होगा। जब एक ने जाकर कुँए में झाँककर देखा तो उसको उसमें अपना मुँह दिखाई दिया-"अरे हाँ, सातवाँ अन्दर है।" उसने कहा।

"देखें, कहाँ है?" एक एक ने अन्दर झाँककर देखा। तय हुआ कि सातवाँ कुँए में था। कुँए में उतरना था अब? बड़ा कुँए की जगह पकड़कर अन्दर लटक गया। दूसरा उसके पैर पकड़कर लटकने लगा। इस तरह सब एक एक का पैर पकड़कर लटकने लगे। बड़ा उन सब का भार सह न सका। उसने पकड़ छोड़ दी। सव नीचे गिर गये, एक दूसरे को पकड़कर चिल्लाने लगे-"मिल गया, मिल गया।"

संयोग से कुँए में बहुत कम पानी था। फिर वे कुँए की दीवार पकड़ पकड़कर ऊपर चले आये। जब वे कुँए में उतरे थे, तो सब अपनी टोपियाँ एक जगह छोड़ गये थे। जब उन्हें गिना, तो वे सात थे।

"अरे वाह, हम सब हैं, कोई गया नहीं।" सोचते सोचते वे घर चले गये।



गलीवर की यात्रायें



इससे पहले कि ब्लेपुस्कू के युद्ध पोतों के सैनिक सम्भाल सकें, मैंने बन्दरगाह में पोतों के लङ्गर निकाल फेंके।



इतने में मुझपर बाणों की वर्षा होने लगी। बाण होने को तो छोटे थे, पर उनके कारण बहुत दर्द हुआ।



ब्लेपुस्कू सैनिकों के बाणों से कहीं मेरी आँखें फूट न जायें, मैंने अपनी ऐनक निकालकर रख ली।



उनमें से पचास बड़े पोतों को लेकर, मैं लिलीपुटों के राज्य की ओर चलने लगा।



लिलीपुट राज्य के किनारे पर पहुँचने से पहले मैंने ऐनक निकालकर जेब में रख ली। मैं किनारे पर पहुँचा। सम्राट और उसके नौकर-चाकर, हजारों लोग मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। "लिलीपुट के सम्राट भी मेरे स्वागत के लिए खड़े थे।



सम्राट ने मेरी राजभक्ति की कई तरह से प्रशंसा की। देश की सबसे बड़ी उपाधि "नाइट" प्रदान करके मेरा सम्मान किया।



राजा ने आज्ञा दी कि यदि मौका मिले तो ब्लेपुस्कू के और भी पोत ले आऊँ। राज्य लालसा का अन्त तो कहीं होता नहीं है।



सम्राट, ब्लेपुस्कू को अपना सामन्त राज्य बनाना चाहता था, और लोगों को गुलाम बना देना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है।



मन्त्रीवर्ग में से कई ने मेरे विचार का समर्थन किया और राजा को समझाया कि बैसा करना अच्छा न था।



लगता है राजा को यह पसन्द न आया। पर उन्होंने कुछ नहीं कहा। गम्भीर हो वे वहाँ से चले गए।



तीन सताह बाद ब्लेपुस्कू से दूतों का एक बड़ा दल आया। वे छीलीपुट के राजा की मैत्री प्राप्त करने के लिये सन्धि करने आये थे। वे युद्ध जारी रखने में असमर्थ थे। सम्राट ने ऐसी सन्धि पत्र लिखवाये, जो कि सभी तरह उसके अनुकूल थे।



फिर वह दल मुझे देखने आया। मेरी और मेरी शक्ति की शत कण्ठों से उन्होंने बार बार प्रशंसा की।



"आप एक बार हमारे राज्य में पधारिए।" उन्होंने अपने सम्राट की ओर से मुझे निमन्त्रित किया। मैं मान गया।



इसके कुछ दिन बाद, सम्राट के दर्शन करके ब्लेपुस्कू राजा के निमन्त्रण के बारे में निवेदन किया। और वहाँ जाने के लिए उनकी अनुमति माँगी। सम्राट की भौंह सिकुड़ी, मगर अन्त में उन्होंने अनुमति दे दी। मुझे ऐसा लगा कि उनका अभिमान मेरे प्रति कुछ कम हो गया था।


एक दिन आधी रात के समय मेरा एक राज-कर्मचारी मित्र, छुपाछुपा मेरे पास आया।
उसने सावधान किया कि मुझ पर बड़ी आपत्ति आनेवाली थी। "सम्राट तो आपके बारे में कुछ कुछ नाखुश थे और आपके विरोधियों ने उनसे आपकी चुगली भी की। उन्होंने कहा कि ब्लेपुस्कू दल से बात करना ही अपराध था। फिर उनके देश जाना तो राजद्रोह ही है। उन्होंने प्रस्ताव पास किया कि आपको मरवा दिया जाए। पर राजा को आप पर दया आई। उन्हें आपकी की हुई सहायता भी स्मरण हो आई। उन्होंने कहा कि आँखें निकलवा देना काफी है। किसी समय यह आपत्ति आ सकती है।"
"जो कुछ मुझे कहना था, मैंने कह दिया, कर कुछ नहीं सकता हूँ। जो कुछ करना है आप ही सोचिये।" यह कहकर मेरा मित्र चला गया।
सवेरा होते ही मैंने अपने कपडे एक बड़े जहाज में रख दिया और सम्राट के पास खबर भिजवाई कि मैं ब्लेपुस्कू जा रहा था। मैं निकल पड़ा।



राजा भोज के समय घारा नगर में यदि नीच जाति के लोग सुन्दर कविता करते थे तो कई ऐसे ब्राह्मण भी थे, जो काले अक्षर भैंस बराबर थे। इनमें से कई कालिदास के पास जाते, उसके पैर पकड़ते, उसे ईनाम दिलवाने के लिए सताते। कालिदास उनको दरबार में ले जाता, अपनी बुद्धिमत्ता से उनको पण्डित निरूपित करता और उनको ईनाम दिलवाता।

इसी तरह का एक आदमी, जिसका नाम केशव शर्मा था, कालिदास के पल्ले पड़ा। उसको पढ़ना लिखना बिल्कुल न आता था, पर उसमें सब बुरी आदतें थीं। जो कुछ उसके पास था, वह सब तो उसने खो ही दिया था। उसके यहाँ खाने के भी लाले पड़ रहे थे। तब उसने कालिदास के पास जाकर कहा-

"जैसे भी हो, मुझे राजा से ईनाम दिलवाइये।"

"तुमने क्या पढ़ा है?" कालिदास ने पूछा। परन्तु केशवशर्मा ने तो कुछ पढ़ा न था। जो कुछ कभी पढ़ा भी था, वह कभी का भूल चुका था।

"अच्छा तो जाओ। कल दरबार में आना। आते ही कम से कम नक्षत्रों के नाम लेना। मैं जरूर थोड़ा बहुत दिलवाऊँगा।" कालिदास ने कहा।

केशवशर्मा अगले दिन दरबार में गया। उसके आते ही कालिदास ने उठकर उसका अभिवादन किया।

"वे कौन आ रहे हैं?" राजा ने पूछा।

"वे बहुत बड़े पण्डित हैं। प्रायः मौन रहते हैं।" कालिदास ने कहा। तुरन्त राजा भोज उठा। केशवशर्मा को नमस्कार करके



उसको आसन दिखाया। वह "अश्विनी, पुनर्वसु, रेवती, कृत्तिका" कहकर बैठ गया। पर यह सुन राजा को आश्चर्य हुआ।

कालिदास ने कहा-"वाह वाह, कितना सुन्दर आशीर्वाद है।"

"विद्वान का आशीर्वाद तो मुझे समझ में ही नहीं आया।" राजा भोज ने कहा। तब कालिदास ने यह श्लोक सुनाया।

"अश्वनी भवतु तेतु मंदुरा

मन्दिरे वसतु ते पुनर्वसु

रेवती पति कनिष्ठ सेवया

कृतिका तनय विक्रमोभव"

[तेरे अस्तबल घोड़ों से भरे हुए हों। तेरे घर में सोना और अधिक हो। रेवती देवी के पति (बलराम) के भाई (कृष्ण) की सेवा से, कृतिका के पुत्र (कुमारस्वामी) की तरह पराक्रमशाली हो।]

यह सुन भोज ने खुश होकर केशवशर्मा को खूब ईनाम दिया।

कालिदास को इससे भी अधिक कड़ी परीक्षा देनी पड़ी। धारा नगर के लोग कहने लगे-"कहते हैं, वह कालिदास का गुरु है। राजपथ पर बैठा है।" यह अफवाह भोज के पास भी पहुँची। भोज ने कालिदास को बुलाकर कहा-" सुनता हूँ कि आपके गुरु नगर में हैं। क्या आपने उनके दर्शन किये?"

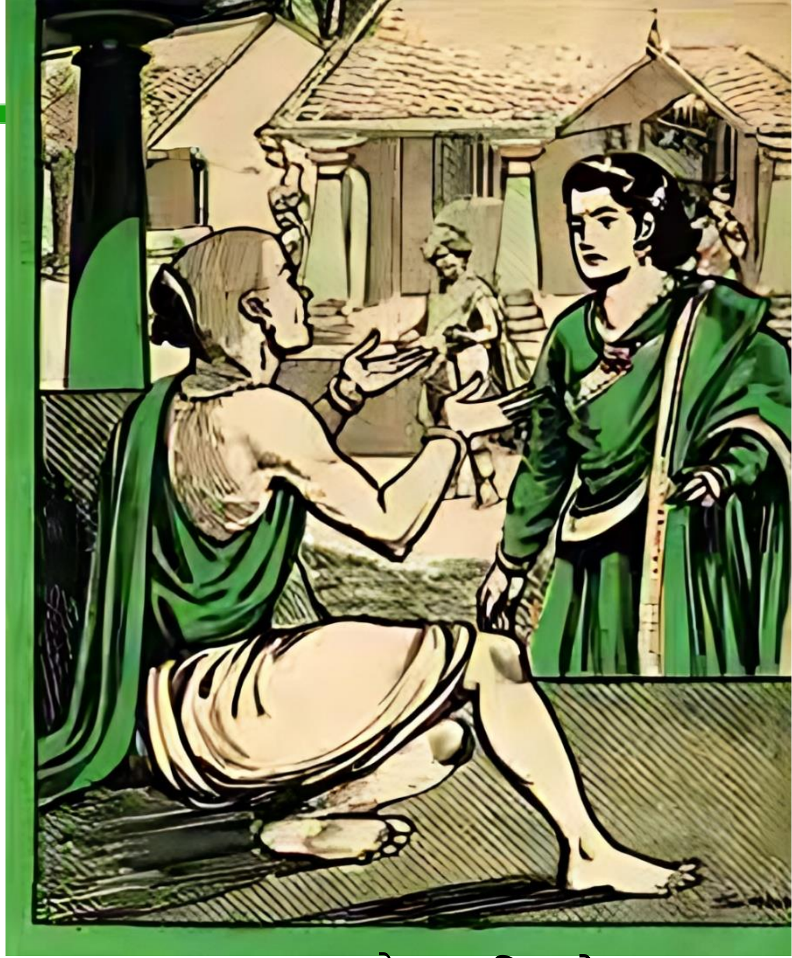
सच कहा जाये तो कालिदास का कोई गुरु न था। इसलिए कालिदास कोई नबाब दे न सका। "मैंने भी सुना है। मैं भी उनके दर्शन करने की सोच रहा हूँ।"

फिर कालिदास खोजता खोजता उस व्यक्ति के पास गया, जिसे उसका गुरु बताया जा रहा था। "सुना है तुम अपने को कालिदास का गुरु बता रहे हो। जानते हो कालिदास क्या करेगा, अगर उसे

मालूम हो गया कि तुम यों धोखा दे रहे हो?" कालिदास ने उसे धमकाया।

वह धोखेबाज़ डर गया। उसने कहा-" यह मेरा कसूर नहीं है। मैं एक गरीब ब्राह्मण हूँ, गुज़ारा नहीं हो रहा है। जब मैंने राजा भोज के दरबार में विष्णुशर्मा नाम के पण्डित का आश्रय लिया, तो उन्होंने मुझे यह करने के लिए कहा। उन्होंने कहा, अगर मैंने यह किया तो मुझे बड़ा ईनाम मिलेगा।" उसने सारी बात बता दी।

इस विष्णुशर्मा को कालिदास पर ईर्ष्या थी। कालिदास जान गया कि उसका अपमान करने के लिए उसने इस ब्राह्मण से यह काम करवाया था। अगर इस ब्राह्मण के बारे में सच कह दिया गया, तो इसी की हानि होगी। विष्णुशर्मा का कुछ न बिगड़ेगा। कालिदास ने एक उपाय सोचा जिससे ब्राह्मण की आशा पूरी हो सकती थी और विष्णुशर्मा को निराश किया जा सकता था। उसने ब्राह्मण से यों कहा-"जो हुआ सो हुआ। राजा को भी मालूम हो गया है कि कालिदास



का गुरु आया हुआ है। इसलिए वे तुम्हें बुलाकर तुम्हारा आतिथ्य करेंगे। उस समय अगर तुमने मुख खोला, तो तुम्हारी पोल खुल जायेगी। तुम्हें जरूर फाँसी दी जायेगी। यदि राजा तुमसे कुछ पूछे तो, मेरी ओर ईशारा करना, मैं तुम्हें कुछ दिलवा दूँगा।"

यह सुन वह ब्राह्मण सन्तुष्ट हुआ। बाद में कालिदास ने राजा से कहा कि उसने गुरु के दर्शन कर लिए थे, और उन्होंने इस समय मौन रख रखा था। राजा भोज बड़ा आनन्दित हुआ। उसने " कालिदास के गुरु" के लिए पालकी भिजवाकर उसे दरबार में बुलाया। दरबार में

सब "कालिदास के गुरु" को उचक उचककर देखने लगे। विष्णुशर्मा मन ही मन खुश था। दरबार में इस विषय पर चर्चा हो रही थी कि "रावण" नाम कैसे आया। कई ने कहा कि वह कैलाश उठाने गया और उसके नीचे गिरकर क्योंकि वह रोया था, इसलिए "रावण" नाम पड़ा। कई का कहना था कि कोई और कारण था। राजा भोज ने "कालिदास के गुरु" की ओर मुड़कर कहा-"कोई ऐसी चीज़ नहीं, जिसे आप नहीं जानते हों। रावण शब्द की ठीक व्युत्पत्ति क्या है?"

वह ब्राह्मण भूल गया कि उसको मुख बन्द रखना चाहिए था। उसने कहा-"वह राभण?" भोज ने चकित होकर पूछा-"स्वामी, आपने रावण कहने के बदले किस कारण से 'राभण' कहा?"

तुरन्त कालिदास ने उठकर कहा-"महाराज, आप गुरु का आशय न समझ सकें। हम अब तक यही चर्चा करते आये थे कि रावण शब्द ठीक है। गुरु पूछ रहे हैं कि यह शब्द 'राभण' क्यों न हो!"

भकार: कुम्भकर्ण,

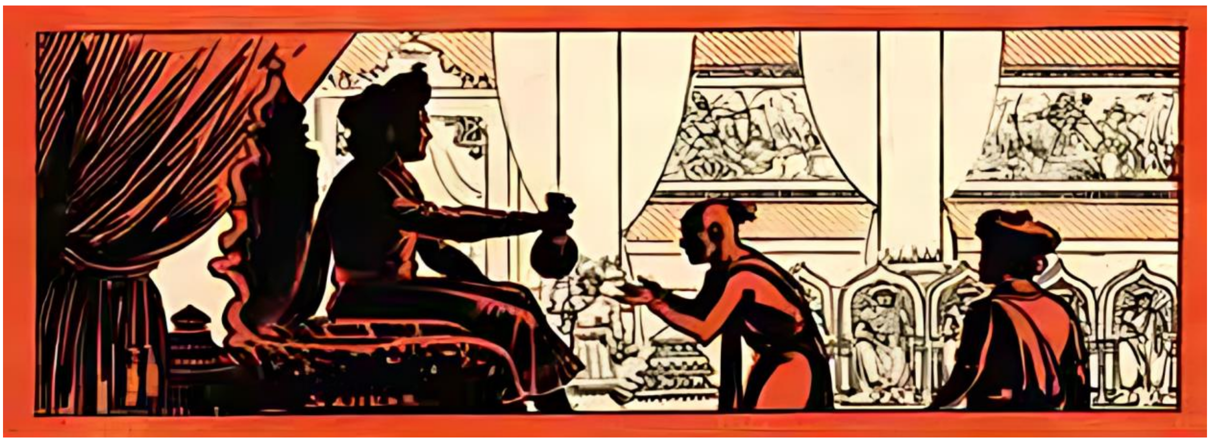
भकारस्थ विभीषण,

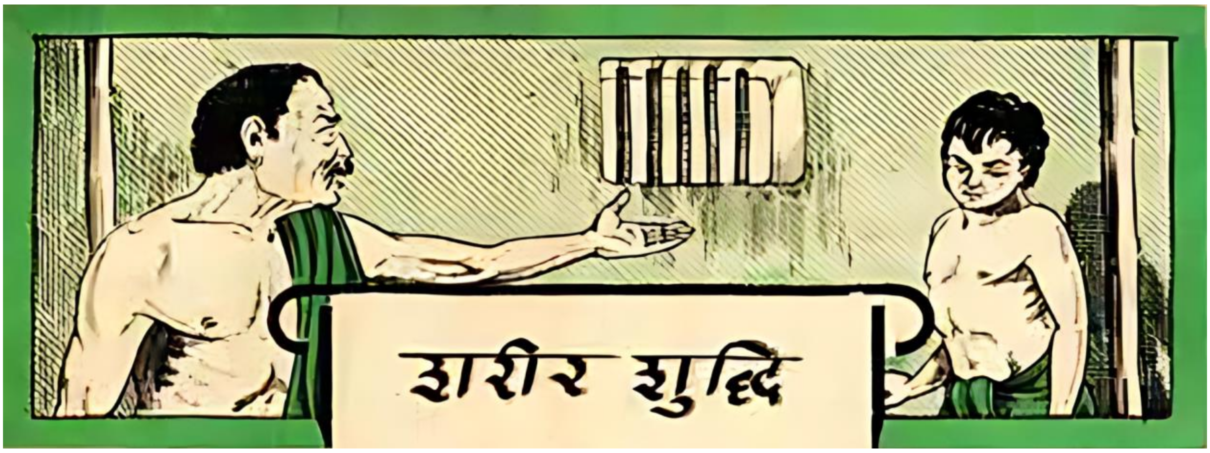
तयोर्ज्येष्ठ, कुलभेद

भकार: कि न विषते?

[कुम्भकर्ण के नाम में भकार है। विभीषण के नाम में भकार है। इन दोनों से बड़े, कुल के श्रेष्ठ रावण के नाम में क्यों न भ हो।]

यह सोच कि कालिदास ने जो गुरु बात कही थी, वही गुरु का आशय था, राजा भोज बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उस ब्राह्मण का खूब सम्मान करके भेज दिया।





एक गाँव में एक किसान रहा करता था। उसके एक लड़का था। उसका नाम था राघव। किसान को अपने लड़के पर बिल्कुल प्रेम न था। वह उससे खूब काम करवाया करता। राघव अच्छा काम काजी भी था। पर क्या फायदा! चाहे वह कितने ही काम करे और कितनी अच्छी तरह करे, उसकी कोई गिनती न होती। जितना ज्यादह काम वह करता, उतना ही ज्यादह काम उसका पिता उसको देता।

राघव के गाँव में रामी नाम की एक गरीब लड़की थी। रामी भी राघव की तरह होशियार और काम करनेवाली थी। दोनों का मन आपस में लगा। विवाह करने की ठानी। विवाह के लिए रामी का पिता मी मान गया। राघव ने इस बारे में अपने पिता से कहा।

"तुम्हें पालना ही मुश्किल हो रहा है, तिस पर एक पत्नी सिर पर ला रहे हो? यह नहीं होगा। जिस दिन मुझसे बिना एक पैसा माँगे अपने पैरों पर खड़े होगे, उस दिन शादी कर लेना।" राघव के पिता ने कहा।

राघव ने सोचा कि जो काम वह पिता के नीचे कर रहा था अगर वह और कहीं करे, तो इतना कमा लेगा कि पत्नी का भरण पोषण कर लेगा। वह एक दिन पिता को बिना कहे कहीं चला गया। उसका इस प्रकार घर छोड़कर चले जाना केवल रामी को ही मालूम था। जाते-जाते एक जङ्गल पड़ा। उस जङ्गल में एक बुढ़िया दिखाई दी। उसके सिर पर लकड़ियों का गट्ठर था।

"दादी, दादी, तुम बड़ी हो, तुम इसे न उठा सकोगी। मुझे दो यह गट्ठर।

डी. वाई. पण्डित

मैं तुम्हारे घर तक इसे ले आऊँगा।" राघव ने कहा।

"कहाँ के हो, बेटा! तुम्हारा नाम क्या है? कहाँ जा रहे हो?" दादी ने अपने सिर का गट्ठर राघव को देते हुए पूछा।

राघव ने उस बुढ़िया को अपनी सारी कहानी सुनाई। फिर कहा-"मैं काम की तलाश में निकला हूँ। जब दो-चार पैसे जमा कर लूँगा तब रामी से शादी कर लूँगा।"

"तब कहीं जाने की क्या जरूरत है? हमारे घर काम करो। जितने दिन काम करोगे, उतने दिन खाना दूँगी और साल भर बाद जो मुझे सूझेगा वह दूँगी।" बुढ़िया ने कहा।

"अच्छा, ऐसा ही सही। तुम जैसी बुढ़िया की सेवा करना ही पुण्य है।" राघव ने कहा।

राघव ने साल भर बुढ़िया के यहाँ काम किया। पशुओं को चारा-बारा देना, पानी लाना, दूध दुहना, आँगन में शाक-सब्जी पैदा करना, जङ्गल से लकड़ी काटकर लाना आदि काम वह बड़ी मेहनत से करता।



बुढ़िया ने उसको दिन में तीन बार पेट भर भोजन दिया। साल खतम होते ही उसने राघव से कहा-"राघव, साल भर जो काम मैंने दिया, उसे तुमने अच्छी तरह किया। कहा था कि तुम्हें कुछ दे दाकर ही भेजूँगी। मेरे पास जो एक गधा है, उसे ले जाओ। आराम से जीओ।"

राघव ने मुख लम्बा-सा किया। यह गधा मेरे किस काम का! उसे चराया कैसे जाय? अगर किसी धोबी को यह बेच दिया तो दो रुपये मिलेंगे। पर



इससे अपनी पत्नी की देख भाल कैसे करूँगा?

उसको निराश देख बुढ़िया ने हँसकर कहा-"अरे पगले, तुम से इतना काम करवाकर क्या मैं तुमको मामूली गधा दूँगी! उसके दोनों कान जरा जोर से पकड़कर तो खींचो, देखो क्या होता है?" उसने कहा।

कान खींचते ही गधा रेंकने लगा। जब जब वह यों रेंकता तब तब मोती हीरे नीचे गिरते। उन्हें देखकर राघव बड़ा खुश हुआ। बुढ़िया को नमस्कार करके उस गधे पर सवार होकर वह घर की ओर निकला।

जब वह एक गाँव में पहुँचा तो अन्धेरा हो गया। उसने एक बुढ़िया के पास जाकर कहा-"दादी दादी, आज रात को खाना दो। यहीं सोकर कल चला जाऊँगा।"

उस बुढ़िया के लड़के ने राघव के गधे को बाहर नारियल के पेड़ से बाँध दिया। राघव भोजन करके सोनेवाला था कि बुढ़िया ने कहा- "बेटा, कल सवेरे झुटपुटे में तुम चले जाओगे, इसलिए जो कुछ देना है, मुझे अभी देते जाओ।"

"जरा ठहरो। दादी, मैं अभी तुम्हें लाकर देता हूँ।" राघव यह कहकर गधे के पास गया और उसके कान खींचे। गधे ने "हा ही हा ही" करते हीरे मोती उगल दिये। राघव ने जाकर अन्दर बुढ़िया को एक मोती देकर कहा-"गरीब हो, इसे रखो।"

जो कुछ हुआ था, उसे बुढ़िया के लड़के ने देखा। राघव जब सो गया, तो उसने राघव के गधे को ले जाकर एक और पेड़ से बाँध दिया और उसकी जगह एक और

गधा लाकर बाँध दिया। फिर उसने राघव के कपड़े खोले। उसने उनमें जो हीरे मोती रख रखे थे, उन्हें ले लिया।

राघव सवेरे उठा। नारियल के पेड़ से बँधे गधे को खोलकर उस पर सवार होकर घर की ओर निकला। उसने अपने पिता से अपने गधे के बारे में कहा-"तुम उसके कान पकड़कर खींचो, तुम्हें ही मालूम हो जायेगा।"

किसान ने लड़के के कहे अनुसार किया। गधा रेंका तो, पर हीरे मोती देने के बजाय, उसने किसान के मुँह पर दुलत्ती दी।

"छी, मूरख गधा कहीं का। लगता है तुझे किसीने खूब उल्लू बनाया है। मुझे अपना मुँह न दिखाओ।" पिता ने उसे डाँटा डपटा।

राघव न जान सका कैसे इतना धोखा हो गया था। वह फिर काम करने के लिए निकल पड़ा। जाते जाते एक जङ्गल पड़ा। उस जङ्गल में एक बढ़ई तख्ते बनाकर उनका गट्ठर बाँध ले जा रहा था।

"बाबा, बाबा! तुम बड़े हो। तुम क्यों उन्हें ढो रहे हो? मुझे दो। मैं उन्हें तुम्हारे घर तक ले जाऊँगा, फिर मैं



अपने रास्ते चला जाऊँगा।" राघव ने कहा। बढ़ई राघव के बारे में सब जान गया। उसने कहा यदि उसने एक साल तक उसके यहाँ काम किया, तो जो कुछ वह उचित समझेगा वह उसे देगा।

राघव इसके लिए मान गया, और साल भर तक उसने बढ़ई के लिए हर तरह का काम किया। जब वह जाने लगा तो बढ़ई ने उसको एक काँसे का थाल दिया, उसने कहा- "यह मामूली थाल नहीं है। कहने की देर है-"थाल खाना दो।" और अच्छे से अच्छे खाना परोस दिया जाता है।"

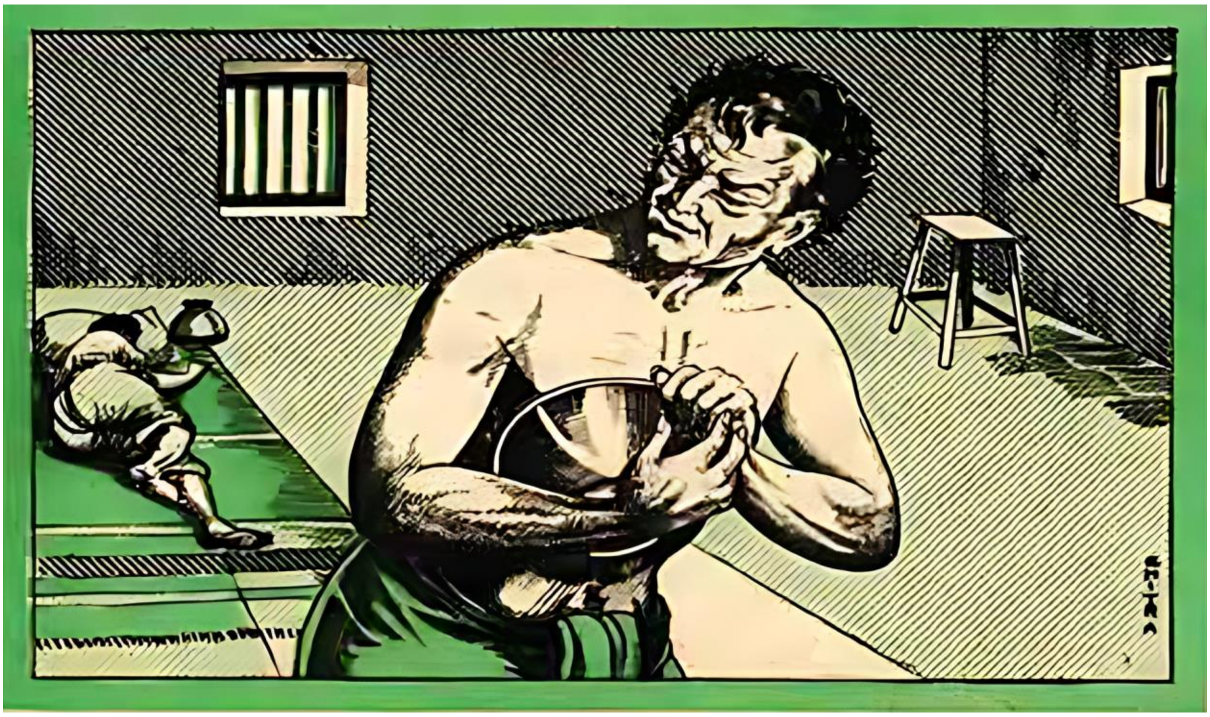
राधव ने इस थाल को सामने रखकर कहा-"थाल, खाना दो।" तुरन्त थाल में दाल, चावल, शाक, आदि परोस दिए गये। उसने खाकर वहाँ से विदा ली। थाल बगल में रखकर निकल पड़ा।

जहाँ जाते जाते पिछली बार अन्धेरा हुआ था, वहाँ इस बार भी हुआ। उसने उस बुढ़िया से कहा-"आज मुझे यहाँ सोने दो। कल उठकर मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा।"

"खाना नहीं खाओगे बेटा?" उस बुढ़िया ने पूछा।

"मेरे पास एक ऐसा थाल है, जो मुझे भोजन देता है। तुम फिक्र न करो।" यह कहकर राधव ने अपना थाल निकालकर पूछा-"थाल, खाना दो।" उसमें इतना भोजन परोसा गया था कि राधव, बुढ़िया और उसके लड़के के खाने के बाद भी खाना बचा रहा।

बुढ़िया के लड़का रात के समय उठा। राधव सो रहा था। उसका थाल लेकर उसकी जगह दूसरा थाल रख दिया। राधव ने उसे ले जाकर पिता को दिखाया। "देखो, इस बार मैं क्या लाया हूँ।



कहकर उसने थाल निकाला, और कहा-"थाल, खाना दो।" परन्तु थाल खाली ही रहा। राघव ने कई बार खाना परोसने के लिए कहा, पर थाल ने सुना नहीं। फिर राघव काम की तलाश में निकला। जाते जाते एक नाला पड़ा। उस नाले के किनारे एक बड़ा पेड़ था। एक अधेड़ उसे कुल्हाड़ी से काट रहा था।

"क्यों भाई, इस पेड़ को क्यों काट रहे हो?" राघव ने पूछा।

"ताकि नाले पर यह पुल का काम दे सके।" अधेड़ ने कहा।

"यह कुल्हाड़ी दो मुझे।" कहकर, राघव ने जोर से दस बार कुल्हाड़ी पेड़ पर मारी। फिर पेड़ ऐसा गिरा कि नाले के दो किनारों पर पुल-सा बन गया। उस आदमी ने राघव के हाथ से कुल्हाड़ी लेकर कहा-"भाई खूब मदद की है। लो छड़ी लो।" उसने कुल्हाड़ी से एक टहनी काटी और उसमें से दो छड़ियाँ बनाकर उसको दी।

राघव उन छड़ियों को लेकर आगे जा रहा था कि उस अधेड़ ने बुलाकर कहा-"भाई, उसे मामूली छड़ी न समझना। तुम



उससे, जिसको पीटने के लिए कहोगे, वह उसे पीटेगी। इसलिए वह हर तरह से काम आयेगी।"

राघव को यह सुनकर आश्चर्य हुआ। "हवा को पीटो, छड़ी।" उसने कहा। तुरन्त वह छड़ी उसके हाथ से निकल गई और हवा को पीटने लगी। राघव ने उस छड़ी को फिर हाथ में ले लिया। उसने सोचा कि उस बुढ़िया के घर ही उसका गधा और थाल चोरी गये थे। तुरन्त वह उस गाँव में गया।

"क्यों दादी, हालचाल ठीक हैं न?" राघव ने पूछा।

"मैंने तुम्हें कभी देखा नहीं।" बुढ़िया ने पूछा।

"हाँ, मैंने तो कभी इस लड़के को देखा नहीं है?" बुढ़िया के लड़के ने पूछा।

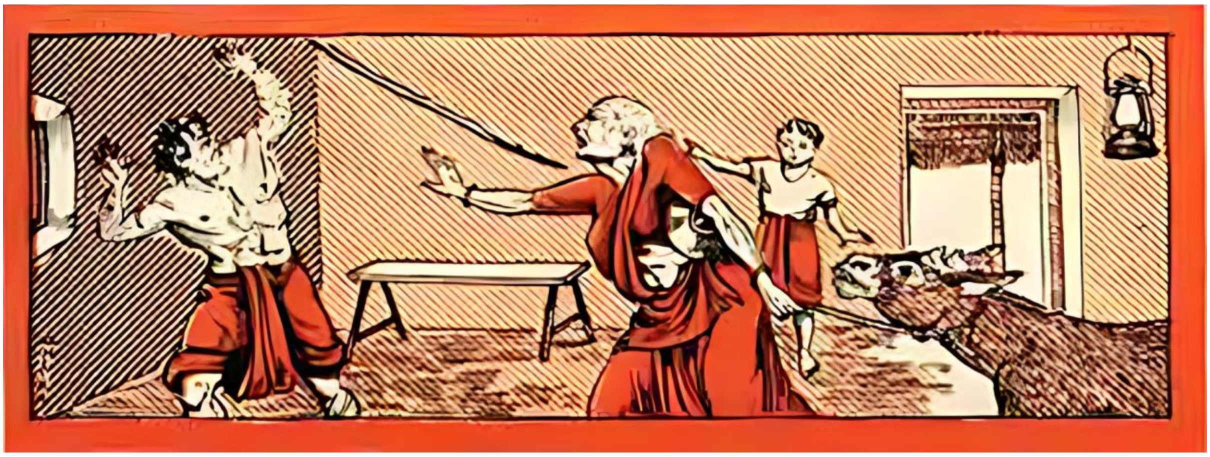
"मेरे गधे और थाल की तुमने चोरी की है। अब तो याद आया कि मैं कौन हूँ?" राघव ने कहा।

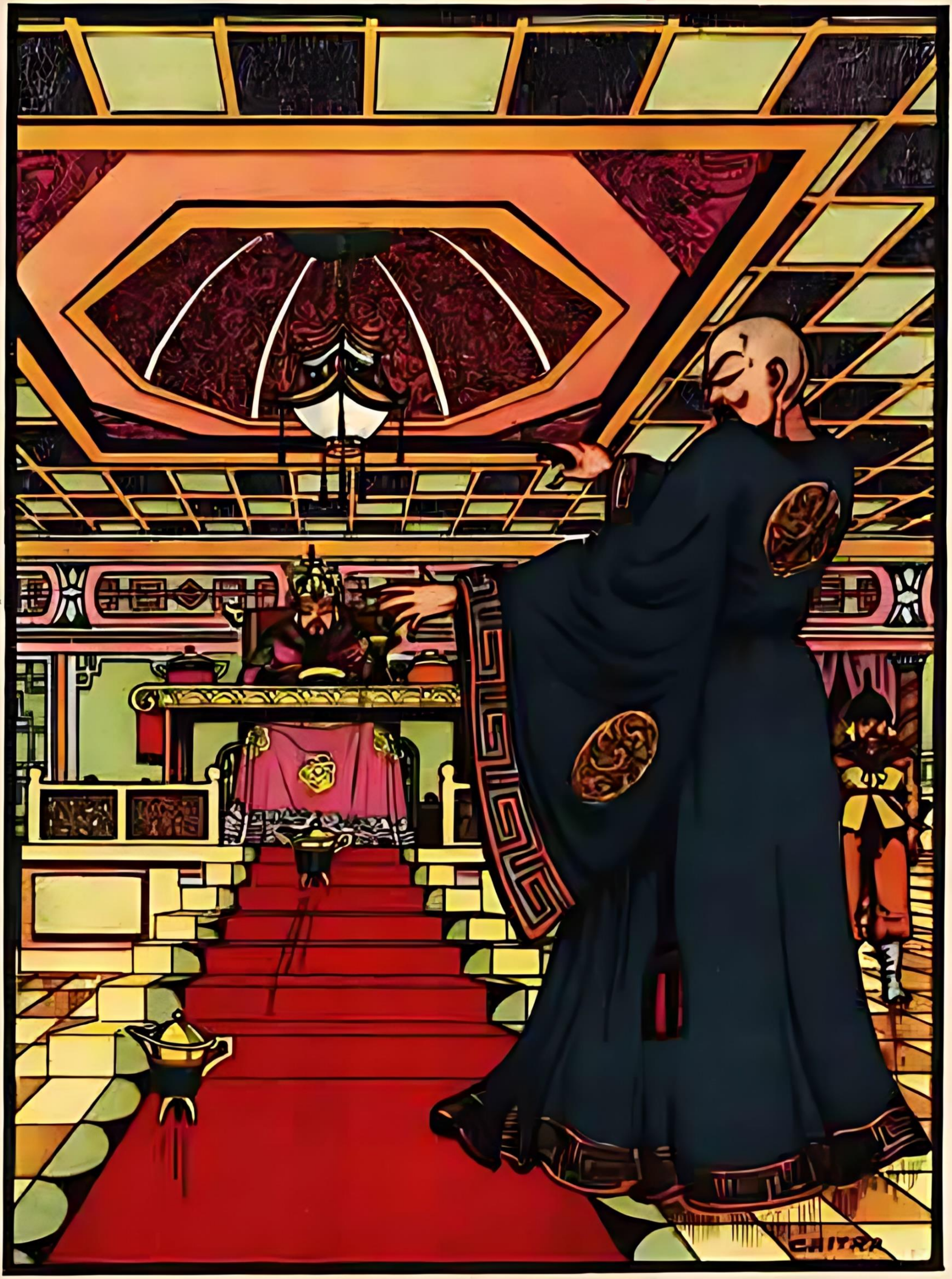
"हमने तुम्हारी कोई चीज़ नहीं चुराई है।" बुढ़िया के लड़के ने कहा।

"उसे पीटो, छड़ी।" राघव ने कहा। तुरन्त उसकी छड़ी हवा में उड़ती गई और उस बुढ़िया के लड़के की मरम्मत करने लगी।

"माफ़ करो, लालच में मैंने तुम्हारी चीज़ें चुराईं। तुम अपनी चीज़ें ले जाओ। मेरे लड़के की रक्षा करो।" जब यह कहकर बुढ़िया खूब रोने लगी, तब राघव ने कहा-"आओ छड़ी।"

उसके बाद, राघव अपने गधे पर सवार हो थाल और छड़ी लेकर अपने गाँव में गया। रामी से शादी की। बिना किसी कमी के आराम से वह जीने लगा।





मार्कोपोलो की साहसिक यात्रायें